तृतीय अध्याय

-- शेवडे के उपन्यासों का स्वरुपगत विकास --

: तृतीय अध्याय :

शेवडे के उपन्यासों का स्वरुपगत विकास

(क) प्रास्ताविक --

उपन्यास आज के साहित्य की सबसे अधिक प्रिय और सशक्त विधा है। वह आज अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँच चुकी है। शेवडे जी के उपन्यासों का स्वरुपगत विकास देखने के लिए हिन्दी उपन्यास के स्वरुपगत विकास का अवलोकन करना आवश्यक हो जाता है। हिन्दी उपन्यास परम्परा में उपन्यास सम्राट मुन्शी प्रेमचन्द एक केन्द्र बिन्दु है। उनको केन्द्र मानकर हिन्दी उपन्यास यात्रा को तीन युगों में विभाजित किया जाता है।

(१) पूर्व प्रेमचंद युग।
(२) प्रेमचंद युग।
(३) प्रेमचन्दोत्तर युग।

इन युगों में उपन्यासों का स्वरुपगत वैविध्य नजर आता है। प्रेमचंद पूर्व युग में सामाजिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी, ऐयारी उपन्यास लिखे गये। मगर उनमें आचार, उपदेश तथा सुधारवादी दृष्टि के साथ केवल मनोरंजन करना उपन्यासों की प्रवृत्ति रही थी। उनका जीवन से कोई संबंध नहीं था। कुछ प्रेमाख्यान परक उपन्यास लिखे गये मगर उनमें प्रेम का रूढिबद्ध वर्णन ही था। कुछ उपन्यासों का अनुवाद कार्य भी होता रहा। इस प्रकार स्वरुप की दृष्टि से वैविध्य होने पर भी उपन्यासों में औपन्यासिक कलात्मकता का अभाव नजर

आता है। प्रेमचंद युग से उपन्यास में सामाजिक स्वं व्यक्तिगत दोनों पक्षों के चित्रण का आरंभ हुआ। समाज की बहुविध समस्याएँ उपन्यास की विषयवस्तु बन गयी। उपन्यासों में सादेश्यता, सामाजिकता, मनोवैज्ञानिकता तथा राष्ट्रीयता जैसी प्रवृत्तियों का आगमन हुआ। जन सामान्य को वाणी मिली और कला केवल मनोरंजन का खिलवाड न रहकर जीवन मर्मों को उद्घटित करनेवाला साधन बनी। आदर्शोन्मुख यथार्थवाद इस युग की बडी देन है। इससे विषय में व्यापकता और चरित्र चित्रण में सूक्ष्मता आ गयी। पाप-पुण्य, हार-जीत, व्यक्ति - समाज, आशा-निराशा, मनोजगत् बर्हिजगत सभी आपस में संपृक्त होकर यथार्थ के क्षेत्र में आये। इस युग में प्रेमचंद जी के साथ अनेक उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में इन प्रवृत्तियोंका विवेचन किया। आख्यान साहित्य में भी मनोवैज्ञानिक यथातथ्यवाद, धोरनग्न यथार्थवाद, अवचेतनवाद, प्रतीक वाद की प्रवृत्तियों का समावेश हुआ। प्रेमचंद के बाद का उपन्यास साहित्य निश्चित रुप से प्रेमचन्द के पूर्ववर्ती साहित्य से श्रेष्ठ है। बाह्यशिल्प विधान में भी वह कुछ आगे है। प्रेमचन्दोत्तर युग में स्वरुप की दृष्टि से उपन्यास का विकास तीव्र गति से होने लगा। आधुनिक युग की चुनौती को स्वीकार करते हुवे रचनाएँ की गई। व्यक्ति और समाज के सापेक्ष सम्बन्धोंपर ध्यान केन्द्रित हुआ। नर-नारी संबंधी नया दृष्टिकोण उभर आया। इस युग में उपन्यासकारों ने जीवन के सभी अंगों को स्पर्श किया। नयी प्रवृत्तियों को जन्म देकर उपन्यास के क्षेत्र को व्यापक बनाया गया। सामाजिक, राजनीतिक, ऐतिहासिक, मनोविश्लेषणात्मक, साम्यवादी, विचारों के साथ साथ आँचलिकता का प्रवेश हुआ। विशेषकर आँचलिकता और प्रयोगशीलता की प्रवृत्ति इस युग में बल पकडती नजर आती है। आधोगीकरण, बौध्दिकता के अतिरेक के कारण समाज में जो स्थित्यंतर उभर आये उसका प्रतिबिम्ब भी उपन्यासों में मिलने लगा है। इस प्रकार आरंभ से लेकर अबतक उपन्यास के क्षेत्र में स्वरुपगत वैविध्य नजर आता है। स्वरुप के दृष्टिसे हिन्दी उपन्यासोंको

निम्नलिखित ढंग से विभाजित किया जाता है।

प्रेमचंदपूर्व युग - उपदेशप्रधान सामाजिक उपन्यास।
मनोरंजनार्थ तिलस्मी और ऐयारी उपन्यास।
पौराणिक, ऐतिहासिक उपन्यास।

प्रेमचंद युग - यथार्थवादी, सामाजिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक साम्यवादी, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक उपन्यास।

प्रेमचंदोत्तर युग - सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, साम्यवादी, ऐतिहासिक, राजनीतिक, आँचलिक आदि उपन्यास।

इसी पार्श्वभूमि पर हम शेवडे जी के उपन्यासों का स्वरुपगत वर्गीकरण करके उसके विकास का अध्ययन करेंगे।

(ख) शेवडे के उपन्यासों का स्वरुपगत वर्गीकरण --

शेवडे जी एक संस्कार सम्पन्न उपन्यासकार थे। उन्होंने भारतीय जनता को जो साहित्य दिया है, उसमें उनका निश्चित रुप से कुछ न कुछ उद्देश्य रहा है। वे उपन्यास को शक्ति के रुप में देखते थे। उनके विचार में निरुद्देश्य साहित्य सृजनात्मकता की कसौटी पर परखा ही नहीं जा सकता। उन्होंने कहा है कि "वे उपन्यास अच्छे हैं, जिनके पढने से समस्तजाति के प्रति श्रद्धा विचलित नहीं होती, नारी जगत के प्रति सन्मान बढता है, जिनसे हमारी सत प्रवृत्ति और प्रगति भावना का पोषण होता है, जिनसे गृह, समाज, देश और धर्म के प्रति निरादर नहीं फैलता तथा जिनसे हमारी कर्तव्य बुद्धि और नैतिकता को प्रोत्साहन मिलता है। मनुष्य मानव द्रोह करना न सीखे, मानव प्रेम का संदेश दे, वही अच्छा

उपन्यास साहित्य है।[१] इस विचार धारा को प्रमाण मानकर चलनेवाले शेवडे जी सत्य, अहिंसा, विश्वप्रेम और मानवता के उपासक थे। उनका उपन्यास साहित्य इसका प्रमाण है। सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक तथा अन्य समस्याओं की ओर वे आदर्श एवं स्वस्थ दृष्टिकोण से देखते थे। इसलिये उनके सभी उपन्यासों में आदर्श का आग्रह रहा करता है। उनके उपन्यासों में जनता, देश, समाज तथा व्यक्ति की मंगल कामना ही मुख्य है। सन १९३० से १९७९ तक के कालखण्ड में उन्होंने ११ उपन्यास लिखकर हिन्दी उपन्यास साहित्य को समृद्ध बनाया है। स्वरुप की दृष्टि से शेवडे जी के इन उपन्यासों को निम्न - लिखित ढंग से विभाजित किया जा सकता है।

(ट)	सामाजिक उपन्यास	-	निशागीत	(१९४८)
			मृगजल	(१९४९)
			पूर्णिमा	(१९५०)
			मंगला	(१९५८)
			इंद्रधनुष्य	(१९६५)
(ठ)	राजनीतिक उपन्यास	-	ईसाईबाला	(१९[illegible])
			ज्वालामुखी	(१९५६)
			मग्नमंदिर	(१९६०)
(ड)	मनोवैज्ञानिक उपन्यास	-	अधूरा सपना	(१९६०)
(ढ)	साहित्यिक उपन्यास	-	कोरा कागज	(१९७३)
(ण)	दार्शनिक उपन्यास	-	अमृतकुम्भ	(१९७७)

---

१ शेवडे - तिसरी भूल (निबंध संग्रह) - मैं उपन्यास नहीं पढता। पृ. १३७

SHIVAJI UNIVERSITY LIBRARY KOLHAPUR

(ट) सामाजिक उपन्यास --

(१) हिन्दी के सामाजिक उपन्यासों का स्वरुप एवं विकास --

सामाजिक उपन्यासों में व्यक्ति और समाज का सुंदर सामंजस्य होता है। अत: सामाजिक उपन्यास समाज के विभिन्न क्षेत्रों के नर-नारी के सम्बन्धों, परिवार, जाति, सम्प्रदाय, वर्ग, राष्ट्र, अर्थदशा, रीति-रिवाज, सभ्यता, संस्कृति आदि का चित्रण करते हुये उनके उद्देश्यों और समस्याओं का निरुपण करते हैं। इनकी विषयवस्तु सामाजिक होती है। ऐसे उपन्यासों को योरोप में 'प्रतिपादक उपन्यास' (थीसिस नॉवेल) कहते हैं। इनमें सामाजिकता की प्रवृत्ति प्रधानरुप से मिलती है। विषयवस्तु सामाजिक होती है। यद्यपि वे सामाजिक ही हो ऐसा कोई बंधन नहीं होता। सामाजिक उपन्यास का कथानक अधिक मात्रा में समस्याओंके आधारपर टिका रहता है। उसके अनुसार वह प्रारम्भ, मध्य और अन्त की अवस्थाओं से गुजरकर विकसित होता है। वह एक ओर समाज में प्रतिष्ठित जीवन मूल्योंका परिचय देता है तो दूसरी ओर उस युग की परिस्थिति एवं मनोवृत्ति से उत्पन्न समस्याओं को प्रस्तुत करता है। सामाजिक उपन्यासकार की दृष्टि आलोचनात्मक रहती है। व्यक्ति और समाज के मध्य उपयुक्त समन्वय स्थापित करना उसका मूल उद्देश्य रहता है। इन कसौटियों पर शेवडे जी के सामाजिक उपन्यासोंका क्रमिक विकास देखना हमारा लक्ष्य है। हिन्दी के सामाजिक उपन्यास के क्षेत्र में उपन्यासकार प्रेमचंद का महत्व प्रकाश स्तंभ से कम नहीं है। आरंभिक सामाजिक उपन्यासों में समस्याओं का जो अगूढ रुप मिलता था, प्रेमचंद ने उसे पुष्ट किया। उन्होंने समाज के पतन का चित्रण करते हुये उसके कारणों का विवेचन किया। साथ ही विकास की भावी दिशाओं का निर्देश भी किया है। समाज के सभी क्षेत्रों, वर्गों को अपनी कथा का विषय बनाया। सही माने मे देखा जाय तो सामाजिक उपन्यासों को अलग अस्तित्व प्रदान करने तथा अपनी शक्ल सूरत देने का श्रेय प्रेमचंद को ही दिया जाना चाहिये। प्रेमचंद युग के बाद अनेक प्रतिभा

शाली उपन्यासकारों का उदय हुआ । जिनमें भगवतीचरण वर्मा, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, अमृतलाल नागर, उदयशंकर भट्ट, सियारामशरण गुप्त, अज्ञेय, यशपाल, फणिश्वरनाथ 'रेणु', श्रीलाल शुक्ल आदि उल्लेखनीय सामाजिक उपन्यासकार हैं। आधुनिक युग में सामाजिक उपन्यास की धारा लोकजीवन को चित्रित करने में व्यस्त नजर आती है। डा.रणवीर रांग्रा के शब्दों में 'आधुनिक सामाजिक उपन्यासों ने साहित्य को नवीन दशा प्रदान की, जिसमें मानव मन की असंख्य आकांक्षाएँ, विषमताएँ, कुंठाएँ उपन्यासों के माध्यम से प्रकट होने लगी है।'[१] स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद देश की एकाग्रता भंग हुई, एकता की अपेक्षा अनेकता की प्रवृत्ति बढी। नर नारी संबंधों ने भी नया मोड लिया। गांधीवादी विचार दर्शन की व्याख्या नये रुप में प्रस्तुत की जाने लगी। इसका प्रतिबिम्ब हमें आधुनिक सामाजिक उपन्यासों में स्पष्ट नजर आता है। अन्त में शेवडे जी प्रेमचन्दोत्तर कालीन उपन्यासकार हैं, पर उन्हें उसी परम्परा के उत्तराधिकारी माना जाता है। प्रेमचन्दजी का 'आदर्शोन्मुख यथार्थवाद' ही उनका भी लक्ष्य था। शेवडे जी भले ही स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासकार रहे, परंतु उनके उपन्यासोंका स्वरुप स्वातंत्र्य पूर्व उपन्यासों से अधिक मेल खाता है। वस्तुस्थिति यह रही है कि उनके उपन्यासों का प्रकाशन स्वातंत्र्योत्तर काल में भले हुआ हो, परंतु वे लिखे गये थे स्वातंत्र्यपूर्व काल में। इसी पार्श्वभूमि पर शेवडे जी के सामाजिक उपन्यासों का क्रमिकविकास देखना होगा।

(२) शेवडे जी के सामाजिक उपन्यासों का क्रमिक विकास --

शेवडे जी के सामाजिक उपन्यासों को हम दो भागों में बाँट सकते हैं। एक वर्ग वह है, जिसमें विभिन्न सामाजिक समस्याओं और वर्ग संघर्षों का वर्णन है। मनोभावों तथा विचारों के परिवर्तन का चित्रण है। दूसरे वर्ग के सामाजिक

---

१ हिन्दी वाङ्मय बीसवी शती - उपन्यास - डा.रणवीर रांग्रा - पृ.१८२

7527 A

उपन्यासों में साधारण प्रेम कथाओं का चित्रण है। शेवडे जी खुद असामाजिकता, विकृत यौन, अश्लीलता के घोर विरोधी थे। लिखते वक्त यदि इसप्रकार की घटना या दृश्य आ जाता तो वे उसे गांधीवादी दर्शन की ओट में छीपा देते थे। वे अक्सर मानवता , अहिंसा, सत्य, प्रेम तथा विश्वबंधुत्व का आदर्श पाठ पढाते नजर आते हैं। "उनके उपन्यासों में एक तरफ प्रेमचन्दकालिन पुरानी आदर्श परम्परा का पालन किया गया है, तो दूसरी ओर उनके उपन्यास मनोवैज्ञानिक विचारधारा पर अपने साहित्य को परखते हुये भारतीय परम्परा के आधारपर नया दृष्टिकोण पेश करते हैं।"[१] शेवडे जी के उपन्यासों में से 'निशागीत' (१९४८), 'मृगजल' (१९४९), 'पूर्णिमा' (१९५०), 'मंगला' (१९५८), 'इंद्रधनुष्य' (१९६५) ये सामाजिक प्रवृत्ति के उपन्यास हैं। ये उपन्यास "भिन्न भिन्न विषयवस्तुओं को लेकर चलते हैं, पर इनमें बुनियादी बात है -- मानव का चित्रण।"[२]

'निशागीत' शेवडे जी के उल्लेखनीय उपन्यासों में से एक है। सामाजिक उपन्यास शृंखला की यह उनकी प्रथम कृति है। इसमें निर्मल प्रेम, समर्पण, सेवा का आदर्श आदि के साथ समकालीन सामाजिक अनेक समस्याओं को चित्रित किया गया है। "'निशागीत' में दिव्य एवं उदात्त प्रणयभाव की एक अत्यंत रोचक कहानी है। इसमें स्त्री-पुरुष के प्रेम का ऐसा स्वरुप है, जिस की भित्ती हृदय और आत्मा है। त्याग और संयम जिसके रथचक्र है, जो अत्यंत दिव्य और पुनीत है, शाश्वत और चिरन्तर है, जिसमें क्षय नहीं, भय नहीं, लय नहीं है। वर्तमान युग की सस्ती और वासना युक्त कुरुचिपूर्ण प्रेम कथाओं के परिवेश में 'निशागीत' सुरुचि और सात्विकता का स्वर भर देता है।"[३] इसमें प्रेम के आदर्श के साथ साथ सामाजिक पक्ष भी अत्यंत प्रबल

---

१ अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य - डा.शं.ना.गुंजीकर - पृ.९६

२ शेवडे - व्यक्तित्व , विचार और कृति - सम्पा. बाँकेबिहारी भटनागर, पृ.७८

३ शेवडे - निशागीत - प्रकाशकीय से उद्धृत

है। इसमें मध्यप्रदेश के एक आँचल विशेष के समाज का चित्रण किया है। नगर, गाँव, वहाँ का परिवेश, छात्र जीवन, वैयक्तीय सत्ता, समाज के अमीरों का लोलुपपणा, दारिद्रय के कारण निम्न वर्ग की जनता का स्वास्थ सुविधाओं से वंचित रहना, पेशेवर प्रतियोगियों का ईर्ष्याभाव जैसी बातों को विशाल पृष्ठभूमि पर चित्रित कर शेवडे जी ने इसे सामाजिक उपन्यास बनाया है। नर्स सुशिला तथा डा.मधुसूदन के प्यार को उदात स्वरुप देकर उसे उन्होंने आदर्श के साँचे में ढाला है। जिससे समाज के सामने एक आदर्श गृहस्थी जीवन का मिसाल प्रस्तुत हुआ है। उपन्यास की वस्तु अत्यंत सुन्दर तथा भव्य हो उठी है। प्रादेशिक वातावरण, सामाजिक समस्याओं के चित्रण के साथ आदर्शोन्मुखता इस उपन्यास का सबसे बडा गुण है। उपन्यास प्रारम्भ से अन्त तक बाँसुरी की एक कसक भरीमीठी तान की भाँति वेदनापूर्ण किन्तु मधुर है, जिसकी टीस की गुमालिका कभी निर्मोल्य नहीं बनाती।

'निशागीत' की तुलना में कलात्मक नजर आनेवाला 'मृगजल' उपन्यास कलाकार के जीवन के लिए समर्पित है। उपन्यास का नायक अशोक निलकंठ एक मशहूर चित्रकार है। कलाकार का जीवनवादी बनना उसे मृगजल जैसा लगता है। उसके जीवन में आनेवाली स्त्रियाँ, प्रेम के अनेक रहस्यों का उद्घाटन करती हैं। परंतु उपन्यासकार ने सच्चे कलाकार की कला का जीवन के सत्योंपर परखनेका प्रयत्न अधिक किया है। फ्रायडीय मनोवृत्ति और आदर्शवाद का बडा रोचक संघर्ष दिखाई देता है। परंतु आखिर शेवडे जी ने इस मनोवृत्ति के पात्रों को महात्मा गाँधी जी के हृदय परिवर्तन के साँचे में ढालकर अपनी गाँधीवादी परम्पराका संरक्षण किया है। 'निशागीत' का प्रेम त्रिकोण यहाँ भी है, पर उसे मात्र प्रेम का त्रिकोण कहना समीचीन नहीं होगा। यह तो जीवन की अनेक पेचिदी समस्याओं के निराकरण की महागाथा है।[६] 'निशागीत' की तरह इस उपन्यास की पृष्ठभूमि भी तत्कालिन मध्यप्रदेश की रही है। प्राकृतिक सौंदर्य स्थली का चित्रण, सतपुडा के हरे-भरे

घने जंगलों का सौंदर्य वैभव तथा उस प्रदेश के लोगों की समस्याएँ आदि का सजीव चित्रण हुआ है। परंतु " उपन्यास का समूचा वातावरण वेदना एवं करुणा से सिक्त है।"[१]

' मृगजल ' के बाद १९५० में प्रकाशित ' पूर्णिमा ' उपन्यास में एक आधुनिक कॉलेज छात्रा की मनोवैज्ञानिक कहानी है, जो स्वयं अपने मन को नहीं समझ पाती। उसे परिस्थितियों की ठोकर खाकर यथार्थ का ज्ञान होता है। " पूर्णिमा " अपने पूर्ववर्ती उपन्यासों की तरह सोद्देश्य रचना है। स्वभाव से चंचल होनेवाली पूर्णिमा अपनी स्वच्छन्दता के कारण लांछित है। फिर भी उपन्यास का नायक विनयकुमार, जो आदर्शवादी युवक है वह जान-बूझकर लांछित पूर्णिमा का स्वीकार करता है। यह उपन्यास का सुखान्त सोद्देश्यता के कारण ही सम्भव हुआ है। अन्यथा पूर्णिमा की कथा एक दर्द भरा दास्तान बन जाती। यहाँ लांछित पूर्णिमा का स्वीकार दिखाकर शेवडे जी ने गाँधीवादी परम्परा का निर्वाह किया है। युग के साथ विचारों को बदलने की उपन्यासकार की प्रगतिशीलता अनुकरणीय है। इसमें पूर्ववर्ती उपन्यासों की तरह परम्परागत सामाजिक परिस्थितियों का वर्णन मात्र न होकर बदलते विचारों का स्वागत और समर्थन हुआ नजर आता है। डा.सुनीलकुमार लवटे जी के शब्दों में "उपन्यास शैक्षिक जगत की पृष्ठभूमि में विकसित है। अत: उसमें कॉलेज जीवन की हास-परिहास भरी जिन्दगी, स्वच्छन्दता तथा रंगीनता का सहज चित्रण स्वाभाविक माना जायेगा।"[२] रंग - व्यंग्य, उथलापन और आदर्शों का यह जीता जागता प्रतिबिम्ब पढकर मुँह से अनायास निकल पडता है - "यह कितना सच है।"[३] " पूर्णिमा " उपन्यास का सबल पक्ष उसका स्वस्थ सामाजिक दृष्टिकोण है। जो पाठक इस उपन्यास को पढेंगे, उनका मन समाज के प्रति उदार हुए बिना नहीं रहेगा।

---

१ शेवडे व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा.सुनीलकुमार लवटे - पृ.४०

२ शेवडे :व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा.सुनीलकुमार लवटे - पृ.४१

३ शेवडे : व्यक्ति, विचार और कृति : सम्पा. बाँकेबिहारी भटनागर,

शेवडे जी का ' मंगला ' (१९५८) उपन्यास तो मानव की मनोव्यथाओं का महाकाव्य है। इसमें अंधों की मनोव्यथाओं का सुन्दर चित्रण है। ' नेत्र हीनों की गीता ' माना जानेवाला यह उपन्यास आरंभ से अन्त तक शायद यही प्रश्न करता नजर आता है -- ' हे करतार, क्यों बनाया मुझे दृष्टिहीन ?'[१] नारी का स्वभाव उसकी चंचलता, मरीचिका के पीछे दौड़ने की उसकी वृत्ति, अंधश्रद्धा समाज आदि का भी हु-बहु चित्र शेवडे जी ने उपस्थित किया है। समाज के विविध समस्याओं को स्वर दिया गया है यह एक विशुध्द सामाजिक कलाकृति है, जिसका राजनीतिसे कोई संबंध नहीं है। संगीत की कलापूर्ण पृष्ठभूमि पर इसकी रचना हुई है। पूर्ववर्ती उपन्यासों में चित्रित प्रेम विषय की व्याख्या का यहाँ उदात्तीकरण हुआ है। प्रेम की भव्य एवं उदात्त कल्पना ही इस उपन्यास की आत्मा है। पात्रों और प्रसंगों का विशेष विस्तार न होते हुये भी छोटी सी व्यवस्थित कथावस्तु और सुंदर शैली इस उपन्यास की विशेषता है। समाज का एक उपेक्षित घटक, अंधा व्यक्ति। जिसके अंधकारमय जीवन में आशा की ज्योति जलाई है। उसके व्यथा वेदनाओंको स्वर देकर ऐसे उपेक्षितोंके प्रति आदर जताने का महान संदेश दिया गया है। बदलते परिवेश में इसकी आवश्यकता महसूस हो रही है।

' मंगला ' उपन्यास के बाद १९६५ में प्रकाशित ' इंद्रधनुष्य ' शेवडे जी का एक सामाजिक उपन्यास है। शैक्षिक जगत के ह्रास के वर्णन के साथ साथ दाम्पत्य जीवन के विभिन्न रंगों की दुनिया का चित्रण करना इसका उद्देश्य है। मातृत्व की भूखी नारी पति से तृप्त न होने पर पतित होती है और पति को गलती महसूस होने पर वह फिर से उसका स्वीकार करता है यही ' इंद्रधनुष्य ' का वर्ण्य विषय है। जैनेंद्र के ' सुनीता ' उपन्यास की तरह दो पुरुष एक नारी तथा ' एक फूल दो माली ' वाला कथानक है। इसमें ज्ञानशंकर, दलीप, वीणा के व्यक्तिगत जीवन की अपनी अपनी ग्रंथियाँ हैं।

---

१ शेवडे - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा. सुनीलकुमार लवटे - पृ.९२

जिसे लेखक ने गांधीवादी दर्शन के आधार पर सुलझाने का प्रयत्न किया है। गृहस्थ जीवन के विभिन्न पहलुओं के परिप्रेक्ष्य में स्त्री-पुरुष संबंध, उससे उठनेवाले संघर्ष आदि का वर्णन करके मानव की मनोवृत्तियों की व्याख्या का प्रयास किया गया है। पाप पुण्य की व्याख्या बदलते परिवेश में की गई है। मातृत्व की भूखी नारी के आधारपर 'सतीत्व' को मानवतावादी परिभाषा भी दी गई है। स्वातंत्र्योत्तर काल में हुए नैतिक, शैक्षिक पतन को देखकर स्वयं शेवडे जी चिंतित थे। इसी चिंता के कारण 'इंद्रधनुष्य' की रचना हुई। इसमें समाज के विभिन्न समस्याओंको स्वर मिला।

शेवडे जी के प्रारंभिक सामाजिक उपन्यास प्रेमचन्द कालीन आदर्श परम्पराका पालन करते नजर आते हैं तो परवर्ती उपन्यास भारतीय परम्परा के आधार पर नया दृष्टिकोण पेश करते नजर आते हैं। प्रेमकथाओं में अधिक भव्यता और उदात्तता आयी है। वर्ण्य विषय में बहुविधता और सूक्ष्मता आयी है। विचारों में मौलिकता का परिचय मिलता है। भाषाशैली सहज सरल बनती आयी है। सामाजिक उपन्यासों की कसौटियोंपर परखने के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रारंभिक उपन्यासों से भी अधिक परवर्ती उपन्यास यशस्वी रहें हैं। वर्ण्यविषय, भाषा, कथानक, उद्देश्य आदि के दृष्टिसे विकास हुआ नजर आता है। पाप पुण्य की नयी व्याख्या, सतीत्व की परिभाषा, शैक्षिक जगत का ऱ्हास परिहास, प्रेम की उदात्त कल्पना, गांधीवादी विचारधारा का समर्थन आदि का परवर्ती उपन्यासों में विकास ही दिखाई देता है।

(३) शेवडे के सामाजिक उपन्यासों में वर्णित समस्याएँ ---

प्रत्येक युग की अपनी मान्यताएँ रहीं हैं। इसी से विभिन्न युगों में भिन्न भिन्न आदर्शों की सृष्टि होती रही है। नये युग के साथ नवीन विचार-धारा का जन्म होता है। परंतु सामाजिक मूल्य जीर्ण वस्तुओं की तरह बदले नहीं जा सकते। उनका प्रभाव निरंतर बना रहता है। वह चिरंतन होता है।

मानव अपनी व्यक्तिगत जीवन धाराओं और संस्कारों के अनुसार मान्य मूल्यों और संस्कारों का अनुकरण करता रहता है। इसका मूलाधार समाज होता है। समाज के सिवा व्यक्ति का स्वतंत्र अस्तित्व ही नहीं होता। व्यक्ति समाज का एक अभिन्न अंग है। व्यक्ति विकास के साथ समाज के विकास की प्रतिक्रिया होती है। शेवडे जी ने अपने सामाजिक उपन्यासों में सामाजिक मूल्य और बदलते परिवेश में सामाजिक समस्याओं का चित्रण किया है। जिनका अध्ययन हमारा लक्ष्य है।

(१) पारिवारिक समस्याएँ --

जिसमें संयुक्त परिवार में नारी की स्थिति, कमाने वाले व्यक्ति का त्याग, विभक्त परिवार में उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयाँ, पारिवारिक व्यक्तिगत संघर्ष, आर्थिक स्थिति के कारण निर्माण हुये प्रश्न, आदि अनेक समस्याओं का चित्रण आ सकता है। विशेषकर स्वातंत्र्यपूर्व काल में संयुक्त परिवार का बहुत बोलबाला था। उसमें नारी की अवस्था अत्यंत दयनीय थी। शेवडे जी को भारतीय संस्कृति और परम्परा के प्रति आस्था होने के कारण उन्होंने संयुक्त परिवार की पृष्ठभूमिपर व्यक्तिका उद्घाटन किया है। 'मंगला' उपन्यास की 'मृणालिनी' तथा 'निशागीत' की 'पद्मा' का चरित्र - चित्रण इसी पृष्ठभूमिपर हुआ है। संयुक्त परिवार में पूरे परिवार को पालने की जिम्मेदारी इन्हीं नारियोंपर आयी है, जिस के कारण आपने परिवार के लिए उन्हें बली जाना पडता है। विवाह, सुख चैन व्यक्तिगत आवश्यकताओंका त्याग कर परिवार के लिए नौकरी करनी पडती है।

(२) विवाह समस्याएँ --

इसमें अनमेल विवाह, विधवा विवाह, प्रेम विवाह, आन्तर जातीय विवाह आदि के कारण निर्माण होनेवाले अनेक प्रश्नों को लेकर चर्चा हो सकती है। शेवडे जी का विवाह सम्बन्धिदृष्टिकोण पवित्र तथा मंगल है। नारी की

स्वाधिनता तथा वैचारिक स्वतंत्रता मानते हुओ भी वे पुराने विचारों के पक्षपाती हैं। 'मंगला' उपन्यास में शेवडे जी कहते हैं -- 'स्त्री पुरुष का वैवाहिक सम्बन्ध अत्यंत पवित्र है। .... प्रीति और मातृत्व के स्वर्गीय जीवन का व्दार उसके कारण खुलता है।'[१] इस प्रेम की स्थिति मोह या शारीरिक आकर्षण पर नहीं है, आत्मापर आधारित है। 'निशागीत' की सुशीला तथा मधुसूदन का विवाह इसी स्थितिपर चित्रित हुआ है। 'इंद्रधनुष्य' के डा. सुमंत और सुमित्रा का वैवाहिक जीवन तो मोती और धागे की तरह एक दूसरे में गुंथा हुआ है। शेवडे जी कहते हैं "शादी ब्याह का रिश्ता बड़ा गहरा होता है। जिसपर दो व्यक्तियों का सुख और भविष्य अवलम्बित रहता है। अगर दोनों का पारस्पारिक प्रेम रहा तथा एक दूसरे को समझने की वृत्ति रही तो सुख ही सुख है, वरना जीवन ही नरक बन जाता है।"[२] 'मृगजल' के अरुणा और अशोक के विवाह विच्छेद का चित्रण इस संदर्भ में द्रष्टव्य है।

'निशागीत' उपन्यास में विधवा विवाह, पुनर्विवाह की समस्या को कलात्मकरीति से उपस्थित किया गया है। डा. मधुसूदन और नर्स सुशीला के मिलन से विधवा विवाह तथा आंतरप्रांतीय विवाह की समस्या एक साथ सुलझा दी गई है। यहाँ शेवडे जी ने विवाह की इस शर्त को स्पष्ट किया है कि, शर्त शारीरिक न होकर आत्मा की होनी चाहिये। डा. मधुसूदन अविवाहित सुन्दर युवक है तो नर्स सुशीला विधवा युवती, रुप सौंदर्य से भी मधुसूदन की तुलना में बहुत ही कम है। फिर भी दोनों एक दूसरे को चाहते हैं। यहाँ शारीरिक आकर्षण से भी आत्मा की पुकार महत्वपूर्ण है। कुंवारी कन्याओं के अवैध प्रेम संबंध के कारण भी कुछ समस्याऐं निर्माण हो जाती हैं। ऐसे भी कुछ चित्र समस्या के रुप में प्रस्तुत किये गये हैं। जैसे -- अशोक पालिया की कन्या का प्रेम प्रकरण 'इंद्रधनुष्य' की नयनकुमारी, 'पूर्णिमा' की पूर्णिमा

---

१ शेवडे - मंगला - पृ.३१

२ शेवडे - कोरा कागज - पृ.४२

जैसी कुवारी लडकियाँ विपुलता में भी अतृप्त हैं। उसी तरह व्यक्तिगत सुख के लिए सुन्दर संसार में समस्याएँ निर्माण करके दु:खी नारी का भी चित्रण किया गया है। जैसे -- 'इंद्रधनुष्य' की वीणा व्यक्तिगत सुख मातृत्व में मानकर मोहवश गलती करती है। 'मृगजल' में मायादेवी तथा 'पूर्णिमा' में पूर्णिमा का चित्रण भी इसी समस्या का द्दष्टव्य है। फिर भी मोहवश गलती क्षमा के लिए पात्र है। इस गांधीवादी दर्शन के आधारपर उनके गलतियाँ उन्हें पश्चात्ताप के अग्नी में तपाकर उनका स्वीकार किया गया है। बदलते परिवेश में यह यथार्थ चित्रण प्राचीन मान्यताओं को चुनौती देता नजर आता है।

(३) व्यक्तिगत अहं भाव के कारण निर्माण समस्याएँ --

स्त्री-पुरुष के अहं के कारण भी अनेक समस्याएँ निर्माण होती हैं। कोई स्त्री अपने को बहुत श्रेष्ठ समझकर पुरुष को चिंता दिखाती है तो कभी कभी पुरुष स्त्री को अपमानित कर स्वयं अपने अहं की तृप्ति कर लेता है। शेवडे जी के 'इंद्रधनुष्य' की 'वीणा', 'पूर्णिमा', की 'पूर्णिमा', 'मंगला' की 'मंगला' इसी अहं की शिकार बनी हैं। परिणामत: वीणा, पूर्णिमा लांछित बन जाती हैं तो मंगला पति को त्याग कर कलंकित बन जाती है। यहाँ नारी स्वतंत्रता की माँग के साथ ही साथ समाज के सामाजिक परिवर्तन के साथ बदलती हुई नारी का चित्रण प्रशंसनीय है। ये नारियाँ समाज से बदला लेना चाहती हैं। पर शेवडे जी के शब्दों में वह पुरुष के बिना पूर्ण नहीं हो पाती।

(४) अंधश्रद्धा और भाग्यवाद --

अनेक सामाजिक समस्याओंका मूल अंधश्रद्धा ही रहा है। प्राचीन

काल से अनेक समस्याएँ अंधश्रद्धा और भाग्यवाद के कारण ही निर्माण होती आयी हैं। इन समस्याओं को चित्रित करना शेवडे जी का उद्देश्य रहा है। शेवडे जी ने अपने उपन्यासों में इन्हें स्वर दिया है। 'मंगला' में अंधश्रद्धा के कारण ही 'मंगला' का विवाह अंधे सदानन्द के साथ होता है। जो एक सामाजिक अन्याय है। उसी तरह देव गति टरै नहिं टर जाती के नियतिवाद के कारण उपन्यास के अनेक पात्र अपना जीवन यापन करते नजर आते हैं। जिनमें सदानन्द है, मृणालिनी है और बड की पूजा करनेवाली सुमित्रा भी है। कुलमिलाकर शेवडे जी के अधिकांश पात्र भाग्यवादी दिखाई देते हैं। पर इन पात्रों के चित्रण के पीछे उपन्यासकार का दृष्टिकोण हमेशा ही प्रगतिशील रहा है। वे दैववादी पात्रों को प्रस्तुत कर उनकी पीडा से हमें दैववाद से दूर जाने तथा प्रगतिशील होकर अपने आपको विकसित एवं आधुनिक बनने की सलाह देते हैं।

(५) भ्रूण हत्या की समस्या --

पाश्चात्य साहित्य तथा मनोविज्ञान के कारण भारतीय समाज में भ्रूण हत्या का प्रमाण बढता हुआ नजर आता है। अपने पाप को छिपाने के लिए अवैध संतान की हत्या की जाती है। तो कभी कभी अपने सौंदर्य को कायम रखने के लिए तथा स्वच्छन्द जीवन पाने के अभिलाषा में नारी भ्रूणहत्या के लिए प्रवृत्त होती है। इनके विरोध में कुछ नारियाँ मातृत्व के सुख में संतोष मानती हैं। 'इंद्रधनुष्य' की वीणा, 'पूर्णिमा' की पूर्णिमा तथा 'मृगजल' की मरियम का चित्रण इस संदर्भ में द्रष्टव्य है।

(६) ग्रामीण जीवन की समस्याएँ --

ग्रामीण जीवन में आर्थिक, दवादारु, यातायात, शोषण, सामाजिक

विषमता का भयानक रुप, ईर्षाभाव आदि को लेकर अनेक समस्याएँ निर्माण होती हैं। इनका चित्रण सामाजिक उपन्यास का लक्ष्य होता है। शेवडे जी ने 'निशागीत', 'मृगजल', 'पूर्णिमा', 'मंगला', उपन्यासों में प्रसंगानुरुप चित्रण किया है।

(७) शैक्षिक जगत की समस्याएँ --

शैक्षिक जगत के हास परिहास के साथ चुनाव, ईर्षाभाव, छात्रों की उच्छृंखलता, अध्यापकों का दृष्टिकोण आदि का चित्रण करते हुये इन समस्याओं को सुलझाने का उपाय सूचित किया गया है। पूर्णिमा तथा इंद्रधनुष्य उपन्यास में चित्रित शैक्षिक जगत इस दृष्टिसे द्रष्टव्य है।

कुलमिलाकर शेवडे जी के सामाजिक उपन्यासों का सिंहावलोकन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि शेवडे जी के सामाजिक उपन्यास भिन्न कथावस्तुओं को लेकर चलते हैं मगर उनका उद्देश्य मानव का चित्र प्रस्तुत करना ही रहा है। प्रारंभिक उपन्यासों की तुलना में 'मंगला' और 'इंद्रधनुष्य' तक आते आते विचारों में अधिक मौलिकता, आशय में गहराई तथा भाषा शैली में सरलता और सुबोधता के साथ मार्मिकता आयी है। हरएक उपन्यास में अलग अलग समस्याओंको स्वर दिया गया है। बदलते परिवेश के अनुसार विचारों में नया दृष्टिकोण अपनाया गया है। गांधीवादी विचार दर्शन का प्रभाव अधिक बढता गया नजर आता है। समस्याओं को सुलझाने का अधिक प्रयास किया गया है। ग्रामीण जीवन की समस्याओं के साथ, प्रेम, शैक्षिक जगत, विवाह की समस्या, कलाकार की व्यथा, वेदना, आदि को भी चित्रित कर सामाजिक उपन्यास को बहु आयामी बनाया है। मानव की महानता में विश्वास रखने वाले शेवडे जी ने इन सामाजिक उपन्यासों में सभी प्रकार की समस्याओं को चित्रित करके उन्हें व्यक्ति, समाज, देश और मानवता के सुख और मांगल्य की ओर इंगित किया है।

(ठ) राजनीतिक उपन्यास --

(१) हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों का स्वरुप एवं विकास --

अरस्तू के मतानुसार मनुष्य एक राजनीतिक प्राणी है। हम जिस युग में रह रहे हैं वह राजनीतिक युग है। हमारे दैनिक जीवन में राजनीति की व्याप्ति इतनी बढ गयी है कि विज्ञान, साहित्य, धर्म, उद्योग, नीति, कूटनीति, आदि क्षेत्रों के साथ व्यक्ति, परिवार, समाज, राष्ट्र तथा विश्वजनित संबंधों में भी वह व्याप्त हो गयी है। इसलिये राजनीतिक उपन्यास की परिभाषा अब तक निर्धारित नहीं हुई है। आलोचक तथा इतिहासकार उसका पृथक रुप से अस्तित्व मानने में हिचकते रहे हैं। राजनीतिक प्रभाव को दृष्टि में रखकर ही किसी उपन्यास को 'राजनीतिक उपन्यास' की संज्ञा देना सर्वथा उपयुक्त है। ऐसे राजनीतिक उपन्यासों में "समसामायिक राजनीतिक घटनाओं, राजनीतिक पात्रों अथवा राजनीतिक सिद्धान्तों का प्राधान्य एवं अंकन रहता है।" [१] राजनीति को चित्रित करने का तात्पर्य केवल यही नहीं होता कि उसके द्वारा किसी वाद विशेष का प्रतिपादन किया जाये। बल्कि समाज में चल रही समसामायिक राजनैतिक गतिविधियों का यथातथ्य निरुपण और राजनैतिक दलों की संकुचित प्रवृत्तियाँ, उनके आपसी संघर्षों के मध्य किसी ठोस सत्य का प्रतिपादन भी किया जा सकता है। इसलिये राजनीतिक उपन्यास को आधुनिक युग के यथार्थ का दस्तावेज भी कहा जाता है। "इस दस्तावेज में विभिन्न राजनैतिक दलों के षड्यंत्र, उनकी स्वार्थ लिप्सा, राजनेताओं की अकर्मण्यता, उनकी जनता को लुटने की एवं शोषण करने की सुनियोजित पद्धति का पर्दाफाश किया जाता है।" [२] राजनीतिक उपन्यासों में स्थल काल की एकता, दृश्यों का सजीव अंकन एवं तत्कालिन बोध का असाधारण महत्व होता है। इनके माध्यम से व्यक्ति, समाज और विश्व को अधिक निकटतासे जान सकता है। आजकल तो राजनीति व्यक्ति और समाज के लिए नित्य का भोजन बनी है। इस पार्श्वभूमि

---

१ साठोत्तरी हिन्दी उपन्यासों में राजनैतिक चेतना - कृष्णकुमार - - बिस्सा, पृ.१९

२ उपन्यास और राजनीति - सुशमा शर्मा, पृ.५९

पर राजनीतिक उपन्यासोंका महत्व और भी बढ गया है।

हिन्दी उपन्यास परम्परा में प्रेमचंद के पूर्ववर्ती उपन्यासों में राजनीतिक चर्चा प्राय: नहीं के बराबर थी। अंग्रेजी शासन काल में यह संभव भी नहीं था। प्रेमचंद ही प्रथम उपन्यासकार थे, जिन्होंने राजनीतिक पृष्ठभूमिपर उपन्यासों की रचना की।[१] प्रेमचंद का 'प्रेमाश्रम' उपन्यास हिन्दी का प्रथम राजनीतिक उपन्यास माना जाता है।[२] राजनीतिक उपन्यास का जन्म प्रेमचंद युग में हुआ और परवर्ती काल में उसका विकास। प्रेमचंद के 'रंगभूमि', 'कर्मभूमि', तथा 'गोदान' उपन्यासों में गांधीजी के आंदोलन, मजदूर आंदोलन तथा समाजवादी चेतना का वर्णन मिलता है। प्रेमचंद के बाद राजनीतिक उपन्यासकारों में यशपाल का नाम विशेष उल्लेखनीय है। उनके 'पार्टी कामरेड', 'देशद्रोही', 'झूठासच' आदि उपन्यासों की पृष्ठभूमि राजनीतिक संरचना रही है। भगवतीचरण वर्मा का 'टेढे मेढे रास्ते', रांगेय राघव का 'विषादमठ', नागार्जून का 'रतिनाथ की चाची', अमृतराय का 'बीज', यादवेन्द्र शर्मा का 'एक और मुख्यमंत्री', श्रीलाल शुक्ल का 'रागदरबारी', मन्नू मंडारी का 'महाभोज' श्री शेवडे जी का 'ज्वालामुखी' तथा 'भग्नमंदिर' आदि उपन्यास राजनीतिक उपन्यास के विकास के पदचिह्न माने जाते हैं। प्रेमचंद से लेकर आजतक के हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों का विकास अत्यंत संतोषजनक है। इनमें भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जो अनेक प्रकार के आंदोलन करने पडे उन सब का अत्यंत विस्तृत चित्रण मिलता है। ये आंदोलन सशस्त्र क्रांति के भी थे और अहिंसावादी भी थे। स्वातंत्र्य प्राप्ति के बाद लिखे गये उपन्यासों में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद का विभाजन और उसके परिणाम, भ्रष्ट राजनीति, भ्रष्टाचारी शासन व्यवस्था, गुटबंदी, साम्प्रदायिक दंगे आदि का वर्णन अधिक मात्रा में किया हुआ नजर आता है। शेवडे जी के राजनीतिक उपन्यासों को इस आधारपर परखा जाना चाहिये।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY, KOLHAPUR

(२) शेवडे के राजनीतिक उपन्यासों का क्रमिक विकास —

स्वतंत्रता प्राप्ति के आन्दोलनों में जालियनवाला बाग के अमानुषिक अत्याचार, १९३० का सत्याग्रह आन्दोलन तथा १९४२ का 'भारत छोडो' आन्दोलन जैसी घटनाएँ असाधारण महत्व रखती है। उन दिनों अंग्रेजों की सख्त खूँखार नीति के विरुध्द आवाज उठाना लोहे के चने चबाने जैसा था। इन दिनों गांधीजी के आदेश के अनुसार १९३० के सत्याग्रह में कॉलेज छोडकर शेवडे जी सत्याग्रह में सक्रिय हिस्सा लेकर गिरफ्तार हुये थे। राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरुप आँखों से देखा था। प्रत्यक्ष अनुभव किया था। राष्ट्रसेवा करने का मन में अपार संतोष था। इसी अनुभव की पूंजी के आधार पर शेवडे जी ने १९३२ में 'ईसाईबाला' इस राजनीतिक उपन्यास की रचना की। इस की पृष्ठभूमि स्वातंत्र्यपूर्व आन्दोलन की राजनीतिक चेतना है। इस उपन्यास का नायक एक आदर्शवादी युवक तो नायिका एक ईसाई लडकी है। दोनों राष्ट्रीय आन्दोलन में हिस्सा लेते हैं। दोनों में परस्पर आकर्षण निर्माण होता है। प्रेम की परिणती विवाह में होती है। परंतु अन्तरजातिय विवाह होने के कारण उन्हें समाज से बहिष्कृत किया जाता है। लेकिन वे इरादे के पक्के हैं। राष्ट्रीय संग्राम में कष्ट और त्याग का आदर्श निर्माण करते हैं। जिससे विरोधकों का हृदय परिवर्तन होकर वे उन्हें आशिष देते हैं। यह पूरी कहानी तत्कालीन समाज की पृष्ठभूमि पर खिलती फूलती है। वह नवयुवकों में राष्ट्रीय चेतना जगाती है। अंतरजातीय विवाह की जडे पक्की करने में सहायक होती है। तत्कालिन सामाजिक परिस्थिति को उजागर करती है। सत्याग्रह का स्वरुप, अंग्रेजों की सख्त खुरखार राजनीति, अत्याचार, समाज का रुख, धारणाएँ, धर्म सम्प्रदाय के झगडे आदि का यथार्थ चित्रण 'ईसाईबाला' (१९३२) में हुआ है। यह शेवडे जी की प्रथम रचना होने पर भी राजनीतिक उपन्यासों में पाई जानेवाली सारी विशेषताएँ इसमें मिलती है।

सन १९५६ में प्रकाशित 'ज्वालामुखी' शेवडे जी का दूसरा राजनीतिक उपन्यास है। इसमें १९४२ के 'भारत छोडो' आन्दोलन का यथार्थ एवं मर्मस्पर्शी

चित्रण है।"गांधी जी की अहिंसात्मक क्रान्ति का इतना सजीव एवं वस्तुनिष्ठ चित्रण अन्यत्र दुर्लभ है।"[१] १९४२ की 'अगस्त क्रान्ति' उपन्यास का वातावरण है। स्वयं शेवडे जी इस क्रान्ति के सेनानी थे। तीन साल के कारावास में उन्हें फाँसी का तख्ता, मृत्यु दंड पाये कैदी का सेल, फाँसी देने की प्रक्रिया आदि का प्रत्यक्ष अध्ययन करने का मौका मिला। इसलिये इस उपन्यास में प्रत्यक्ष आँखों देखी घटनाओंका यथार्थ चित्रण हुआ है। इसे लेखक की आपबीती भी कहा जा सकता है।" आजादी के आन्दोलन में अपने जीवन को देश के लिए समर्पित करनेवाले स्वतंत्रता सेनानियों की यह कथा है। तभी तो शेवडे जी ने इसे शहिदों को अर्पित किया है।"[२] राजनीतिक उपन्यासों में स्थलकाल की एकता, दृश्यों का सजीव अंकन एवं तत्कालिन बोध का असाधारण महत्त्व होता है। इन सब तत्वों के प्रति शेवडे जी की सतर्कता 'ज्वालामुखी' में दृष्टव्य है। देशभक्ति, स्वतंत्रता प्रेम, मृत्यु जैसे बातों का विवेचन विचारणीय है। इस राजनीतिक उपन्यास की प्रशंसा करते हुए ब्रजभूषण सिंह ने कहा है कि"'ज्वालामुखी' में प्रेम का स्वरुप भव्य और उदात्त रुप में प्रस्तुत हुआ है, जो राजनीतिक उपन्यासों में अन्यत्र दुर्लभ है। पात्रों का चित्रण यथार्थ की भूमिपर होने के कारण जीवन्त और प्रेरणाप्रद है।"[३] 'ज्वालामुखी' में भारतीय आत्मा की मुक्ति पाने की छटपटाहट और तडप शब्दों में साकार हो उठती है। अगस्त क्रान्ति के भव्य एवं विराट स्वरुप के दर्शन होते है। शेवडे जी के प्रथम राजनीतिक उपन्यास 'ईसाईबाला' की तुलना में 'ज्वालामुखी' उपन्यास में प्रेम का स्वरुप भव्य और उदात्त रुप में प्रस्तुत है। चरित्र चित्रण में सजीवता आयी है। उद्देश्य के दृष्टि से सिर्फ

---

१ शेवडे व्यक्तित्व विचार और कृति - सम्पा.डॉ.केविहारी भटनागर, पृ.५८

२ शेवडे व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा.सुनीलकुमार लवटे - पृ.४३

३ हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों का अनुशीलन - डा.ब्रजभूषणसिंह, पृ.३३०

साम्प्रदायिक एकता पर ही बल न होकर राष्ट्रप्रेम, बंधुभाव, एकता, स्वतंत्रता एवं मुक्ति के लिए छटपटाता हृदय आदि को दिखाया गया है। मृत्यु जैसे गहन विषयपर भी विवेचन किया गया है। सशस्त्र क्रान्ति का आँखों देखा हाल प्रस्तुत कर गांधीवादी दर्शन का प्रचार और प्रसार करना भी शेवडे जी का लक्ष्य रहा है। देशकाल वातावरण की निर्मिती में 'ईसाईबाला' से भी अधिक सफलता मिली है। जिससे उपन्यास की कथावस्तु रोचक बनी है। इससे 'ज्वालामुखी' इतिहास बनानेवाले सेनानियों की जीवन गाथा बना है।

'ज्वालामुखी' के बाद का राजनीतिक उपन्यास 'मग्नमंदिर' है। उसके पाँच साल बाद यह प्रकाशित हुआ। इसमें स्वातंत्र्योत्तर भारत की वस्तुस्थिति का यथार्थ और निर्भिक चित्रण बडे प्रभावशाली एवं सजीव ढंग से किया गया है। 'ज्वालामुखी' की पृष्ठभूमि स्वातंत्र्यपूर्व अगस्त क्रान्ति की है तो 'मग्नमन्दिर' की पृष्ठभूमि स्वातंत्र्योत्तर भारत के स्थिति की रही है। गांधीजी ने स्वतंत्र भारत के मन्दिर का जो मानचित्र बनाया था वह उसके उत्तराधिकारियों व्दारा कैसे खंडित और मग्न बना डाला इसका स्पष्ट विश्लेषण तथा इस अवस्था में भी आशा का स्वर प्रस्तुत करना इस उपन्यास का वर्ण्य विषय रहा है। इस उपन्यास का नायक मानो 'ज्वालामुखी' के नायक का पुनरुजीवित रुप है। स्वातंत्र्यपूर्व की जो अखण्डता थी वह छिन्नभिन्न होकर खण्डित हो गयी। स्वातंत्र्योत्तरकाल में गांधीजी के स्वप्न मंदिर का मग्न मन्दिर बन गया। स्वार्थलिप्सा, भ्रष्टाचार, जुल्म, प्रतिशोध की भावना आदि के हम शिकार बन गये। परिणाम स्वरुप आदर्श गिर गये। एकता टूट गयी। शेवडे जी ने इस राजनीतिक परिवर्तन को करीब से देखा, अनुभव किया और अपनी अनुभूति को 'मग्नमन्दिर' में बडी सूक्ष्मता के साथ अभिव्यक्त किया। "'मग्नमंदिर' में एक ऐसे मुख्यमंत्री के प्रशासन में व्याप्त भ्रष्टाचार की कहानी चित्रित है, जो स्वतंत्रतापूर्व काल में त्यागी, राष्ट्रभक्त और कर्मठ सेनानी थे। पर सत्ता प्राप्ति के उपरान्त वे भ्रष्टाचार के गर्त में फँस जाते हैं।"[१]

---

१ शेवडे - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा. सुनीलकुमार लवटे - पृ.४७

परिणाम स्वरुप राज्य भ्रष्टाचार का केन्द्र बन जाता है। इस उपन्यास के अधिकांश पात्र भ्रष्टाचार के पोषक हैं। चरित्र चित्रण में परवर्ती उपन्यासों की तुलना में इसमें स्वाभाविकता, रोचकता तथा मौलिकता का अधिक परिचय मिलता है। समूचा ' मग्नमन्दिर ' उपन्यास देश की आन्तरिक प्रशासनिक स्थिति में व्याप्त घोर निराशा को स्वर देता है। इसलिये यह कृति यशपाल के ' झूठासच ' के समान श्रेष्ठ मानी गयी है। शेवडे जी राजनीति में भले सक्रिय नहीं थे, पर राजनीतिज्ञों के करीब जरुर थे। अपने सारे निरीक्षणों को संजोकर उन्होंने ' मग्नमंदिर ' को स्वातंत्र्योत्तर भारतीय राजनीति का आलेख बनाया है।

(३) राजनीतिक उपन्यासों में वर्णित समस्याएँ --

शेवडे जी के राजनीतिक उपन्यासों पर गांधीजी के विचारों का प्रभाव था। गांधीवादी विचार दर्शन उनके उपन्यासों का सूत्र था। शेवडे जी स्वयं गांधीजी के विचारों से प्रेरित थे। उनके विचार से गांधी जी का रास्ता कायरों का नहीं बहादूरों का होता है। भारत की विशिष्ट जीवन प्रणाली और आध्यात्मिकवृत्ति में अहिंसा जो चमत्कार दिखा सकती है, वह हिंसा के वश की बात नहीं। इसलिये अहिंसा के मार्ग से सत्याग्रह करना स्वातंत्र्य संग्राम का यशस्वी मार्ग रहा करता है। महात्मा गांधी के इस सूत्र को अपनाते हुअे शेवडे जी ने राजनीतिक उपन्यासों में अनेक समस्याओं को चित्रित किया है। उन समस्याओं के स्वरुप को स्पष्ट करना यहाँ हमारा लक्ष्य है।

१. अन्तरजाति विवाह की समस्या --

विवाह एक पवित्र बंधन है। जात पात, धर्म सम्प्रदाय के शिकंजोंसे उसे मुक्त रखना चाहिये। अन्तरजाति विवाह के कारण साम्प्रदायिक एकता बढती है। देश की एकता के लिए, साम्प्रदायिक झगडे मिटाने के लिए, विश्व -

बंधुत्व की भावना बढाने के लिए अन्तरजातिय विवाह को आवश्यक माना जाता है। परंतु अंधश्रद्धा समाज में इसे आजतक विरोध ही होता रहा है। स्वातंत्र्यपूर्व काल में तो इसकी स्थिति अत्यंत भयानक थी। अन्तरजाति विवाह करनेवाले युवकों को समाज से बहिष्कृत किया जाता था। साम्प्रदायिक झगडे होते थे। देश के विकास के दृष्टिसे यह स्थिति घातक थी। ऐसे समय देश की एकता के लिए, साम्प्रदायिक एकता के लिए महात्मा गांधीजी के साम्प्रदायिक एकता के बात से शेवडे जी प्रभावित थे। उन्होंने अपने 'ईसाईबाला' इस उपन्यास में अन्तरजातिय विवाह दिखाकर एक क्रान्तिकारी कदम उठाया। उपन्यास का नायक एक आदर्शवादी युवक है तो नायिका एक ईसाई लडकी है। अन्तरजातिय विवाह होने के कारण समाज उन्हें बहिष्कृत करता है, मगर वे इरादे के पक्के हैं। स्वातंत्र्य संग्राम में त्याग और सेवा का आदर्श दिखाते हैं। वही समाज उन्हें आशिष देता है। यहाँ शेवडे जी अन्तरजाति विवाह का समर्थन और साम्प्रदायिक एकता पर बल देने के प्रति कृत संकल्प नजर आते हैं।

२. भ्रष्टाचार की समस्या --

भ्रष्टाचार हमारे देश को लगा हुआ कलंक है। गल्ली से लेकर दिल्ली तक हरएक क्षेत्र में इसकी जडे फैल चुकी हैं। सत्यपर असत्य का आवरण पड गया है। व्याप्त भ्रष्टाचार ने जनता के पवित्र मन्दिर को भग्न कर दिया है। छोटे से छोटे काम के लिए भी रिश्वत ली जाती है। सत्य को झूठ और झूठ को सत्य साबित किया जा रहा है; अपने लोगों को ठेका दिया जाता है। मंत्री हमारे बनायी जाती हैं नौकरियों में पैसा लेकर रोजगारी दि जाती है। कमाई के हजार दरवाजे खुले हो गये हैं। भ्रष्टाचार ने कला, शिक्षा, साहित्य, संस्कृति, धर्म आदि सभी क्षेत्रों में अपना प्रभाव जमाया है। वह इतना बढ चुका है कि आज कल उसे ढूंढ निकालना ही कठिण काम हुआ है। परिणाम स्वरुप महात्मा गांधीजी का स्वप्नमंदिर, भग्न मन्दिर बन गया। शेवडे जी ने इसे करीब से देखा और चिंतित होकर अत्यंत मार्मिकतासे 'ज्वालामुखी' और 'भग्नमन्दिर' में

उसे चित्रित किया।' ज्वालामुखी ' उपन्यास में व्यापारियों के भ्रष्टाचार के बारे में कहा गया है कि - "महायुध्द का जमाना था, व्यापारियों के लिए धन की वर्षा हो रही थी। सफेद बाजार, कालाबाजार, फौजी सामान सप्लाई करने के ठेके कमाई के हजार दरवाजे खुले थे। यही एक पर्वणी थी जो बारबार नहीं आने वाली थी। इस वक्त जितनी बने कमाई कर लो और फिर जिन्दगी भर ऐश करो।"[१] स्वतंत्रता के बाद राजनीति प्रबल हो गई, और बेचारी देशभक्ति पीछे पड गई। प्रजा के कल्याण के नामपर शासन के हाथ में सभी सूत्र आ गये। सारी अर्थव्यवस्था शासन के इशारे पर बनने बिगडने लगी। भ्रष्टाचार ने सभी क्षेत्रोंपर अपना प्रभाव जमाया। शेवडे जी ने तत्कालिन परिस्थितिका' मग्नमंदिर ' में यथार्थ चित्रण कर पर्दाफाश करने का प्रयास किया है। मुख्यमंत्री, मंत्री तथा सरकारी कर्मचारी सभी एकही भ्रष्टाचार के रास्ते पर चल रहे थे। उनके सामने था वैयक्तिक स्वार्थ, रिश्वत और गरीबोंका शोषण। कागज पर योजनाएँ थी मगर ठेके अपने ही लोगों को दिये जाते थे। गरीबों का शोषण हो रहा था। मुख्यमंत्री ही भ्रष्टाचार का केन्द्र बन गया था। स्वातंत्र्यपूर्व जो कार्यकर्ता त्यागी, राष्ट्र प्रेमी था, वही आज भ्रष्टाचार के गर्त में डूब रहा था। जनता पहले भी बेजबान थी, अब भी बेजबान रही। भ्रष्टाचार इतना फैल गया कि झूठ को भी सच मानने की नौबत आ गयी। इस प्रकार शेवडे जी ने भ्रष्टाचार की समस्या को अत्यंत मार्मिकतासे चित्रित किया है।

२. चुनाव की समस्या --

राजनीति में चुनाव की समस्या भी अपना एक विशेष महत्व रखती है। चुनाव के समय नेता लोग जनता से झूठे वायदे करते हैं। गुटबंदिया चलती हैं। जिसके पास पैसा है, वह ओट खरिदता है। झूठ को भी सच शाबीत

---

१ शेवडे - ज्वालामुखी - पृ.८९

करने का प्रयास होता है। बीच बीच में मारपीठ, झगडे हो जाते हैं। बेजान आदमीओंका खून बहता है। पर जीत जाने के बाद ये नेता वादे तो पूरे नहीं करते उलटे जनता को बहका देते हैं। चुनाव प्रचार कार्य का एक नमूना प्रस्तुत करते हुये ' मग्नमंदिर ' में शेवडे जी कहते है -- आपके पास वोट हैं तो आप उनके देवता हो गये। लीजिए यह मोटर, ये हैण्डबिल, यह रुपया, यह हमारा फोटो और यह हमारी निशानी। राजनीतिक नभोमंडल में जैसे तुफान आ जाता है। पद लोलुप और उनसे लाभ उठानेवाले व्यक्तियों के सिरपर जैसे भूत सवार होता है। ऐसे वक्त सेक्रेटरियट के लोग खुशियाँ लुटते हैं। शेवडे जी उनपर व्यंग्य करते हुये लिखते हैं -- सेक्रेटरियट इस समय शांत रहकर खुशियाँ लुटते हैं, मगर चुनाव के अधिकारी मात्र बडे व्यस्त रहते हैं। ' मग्नमन्दिर ' में इसका सुंदर चित्रण किया गया है।

४. पत्रकारिता की समस्या --

समाचार पत्र लोक जागृति का साधन है। सुयोग्य सम्पादक एक बादशाह से कम नहीं है। राजनीति में पत्रकारिता का बहुत महत्व होता है। परंतु पत्रकारिता जबतक स्वतंत्र है तब तक ही समाज का कल्याण है। समाज के विरुध्द जनता के विरुद्ध कुछ हो गया तो वह पत्र में आग बरसाती है। जब वह सरकारी पत्र बन जाता है तो मानो शेर बूढा बन गया। पत्रकारिता ने समाज जनजागृति का कार्य करना चाहिये। परंतु आजकल स्वतंत्र भारत में ये पत्रकारिता सरकार के हाथ में बंद हो गयी है। अनेक निर्बन्ध लगाये गये हैं। सच्चे सम्पादक तथा कर्तव्यनिष्ठ पत्रकारों को भी शासन ने खरीद लिया है। इसलिये समाज के हित के बदले शासन का पुरस्कार तथा उनके गौरव गाथा का गान ही सुनाई दे रहा है। इस स्थिति का चित्रण शेवडे जी ने ' मग्नमन्दिर' उपन्यास में किया है। शेवडे जी ने धनंजय को कर्तव्यनिष्ठ पत्रकार के रुप में चित्रित किया है। पत्रकारिता का उज्वल पक्ष ' युगांतर ' तो ' जागरण' कलुष

पड़ा है। 'जागरण' पत्र की बागडोर शासन के हाथ में है। युगांतर को शह देने के लिए इसकी निर्मिति की गयी है। युगांतर के सम्पादक पर अनेक आरोप लगाये गये हैं। अनेक समस्याओं का उसे सामना करना पड़ा रहा है। इस प्रकार राजनीति में अनेक निर्बन्धों के कारण कर्तव्यनिष्ठ पत्रकारों की और समाज की हानी होती है। जिसका सुन्दर चित्रण 'भग्नमन्दिर' उपन्यास में मिलता है।

शेवडे जी गांधी जी के मनसा, वाचा, कर्मणा से सच्चे अनुयायी थे। गांधीजी के दिखाये मार्गपर ही देश को स्वाधीनता मिलेगी ऐसी उनकी धारणा थी। उनके राजनीतिक उपन्यासों में यही गांधीवादी विचार दर्शन प्रकट हुआ है। 'ईसाईबाला' में साम्प्रदायिक एकता, 'ज्वालामुखी' में अगस्त क्रान्ति का वर्णन तो 'भग्नमन्दिर' में स्वातंत्र्योत्तर भारत में गांधीजी के स्वप्न मंदिर को कैसे भग्न बनाया जा रहा है इस स्थिति का वर्णन किया गया है। ये राजनीतिक उपन्यास अलग अलग पृष्ठभूमियों को लेकर लिखे गये हैं। इनमें स्थलकाल की एकता है। दृश्यों का सजीव अंकन है। तत्कालीन परिस्थिति का बोध होता है। 'ईसाईबाला' से लेकर भग्नमंदिर तक के राजनीतिक उपन्यासों में राजनैतिक दलों के षड्यंत्र, उनकी स्वार्थ लिप्सा, राजनेताओं की अकर्मण्यता, जनता का शोषण करने की सुनियोजित पद्धति आदि का पर्दाफाश किया गया है।

(ड) मनोवैज्ञानिक उपन्यास —

(१) मनोवैज्ञानिक उपन्यासोंका स्वरूप एवं विकास —

मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहने का तात्पर्य उन उपन्यासों से है, जो मूलत: मनोविश्लेषण पर आधारित होते हैं। मानव मन का प्रत्यक्ष उद्घाटन अर्थात् मनोभूमि का प्रत्यक्षीकरण मनोवैज्ञानिक उपन्यास है। इन में मनुष्य के मन को अधिक महत्व होता है। जीवन का हरकार्य मन से निर्देशित होता

है, और मन में उत्पन्न विकार का अध्ययन करना मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार का कार्य होता है। अचेतन की अद्भूत दुनिया के करिश्मे इसी विधा के सहारे पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किए जा सकते हैं। मनोवैज्ञानिक उपन्यास का मूलतत्व पात्रों का मनोचित्रण करना ही है। उपन्यास के शेष तत्व इसी केन्द्र से संचलित होकर इसके ईर्द-गिर्द चक्कर काटते हैं। पात्रों के क्रियाकलाप का परिचय देने की अपेक्षा उन कार्यों के प्रेरक कारणों का सूक्ष्म विश्लेषण करना मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की विशेषता होती है। इस कार्य में उपन्यासकार को मनोविश्लेषण विधि की सहायता लेनी पडती है।

मनोविज्ञान साहित्य के लिए नयी वस्तु नहीं है। आदिकवि वाल्मिकी से लेकर आजतक के सभी कवियों और साहित्यकारों की कृतियों में इसका रुप लक्षित होता है। किन्तु मनोविश्लेषणवाद अपने सीमित अर्थ में आधुनिक चिज है। मनोविश्लेषणवादी उपन्यास का आरम्भ प्रेमचंद के उपन्यासों से ही होता है मगर आलोचकों ने प्रेमचंद के मनोविज्ञान को इतना महत्व नहीं दिया जितना उनके सामाजिक यथार्थ को। प्रेमचंद के उपन्यासों से निर्मित मनोविश्लेषण की धारा परवर्तीकाल में मनोविज्ञान की नवीन खोजों से प्राप्त सत्यों को आधार मानकर चली, जिसका सम्बन्ध मूलत: अचेतन के लोक से है, चेतन से नहीं। इसी समय फ्रायड, एडलर और युंग के सिद्धान्तों, क्राफ्ट एबिंग और हवेलिक एलिस की धारणाओं तथा लारेन्स के साहित्य ने हिन्दी उपन्यास को नई दिशा, नया दिगंत प्रदान किया। अवचेतन मन, स्वप्नवाद, एडीपस काम्प्लेक्स आदि के अध्ययन ने हिन्दी उपन्यासकारों को मानव मन की गति खोजने के लिए नए साधन प्रदान कर दिये। जिससे चरित्र चित्रण को नया अर्थ तथा नया मोड आया। इससे उपन्यासकार व्यक्ति के मानस की गहराइयों को नापने लगा। इसधारा के प्रमुख उपन्यासकार हैं -- जैनेन्द्र, अज्ञेय, इलाचन्द जोशी, भगवतीचरण वर्मा, डा. देवराज, धर्मवीर भारती, निर्मल वर्मा आदि। व्यक्ति की दमित वासनाओं, कुण्ठाओं, आत्मपीडन और अचेतन मन की कथाएँ

इनके वर्ण्यविषय रहे हैं। कहीं कहीं अत्यंत सूक्ष्म, जटिल और गंभीर शैली में यौन प्रवृत्तियों का चित्रण भी नजर आता है। इनमें स्त्री-पुरुष प्रेम की समस्याओं को मनोविश्लेषणवाद के धरातल पर सुलझाया गया है। 'शेखर एक जीवनी', 'नदी के द्वीप', 'सुनीता,' 'त्यागपत्र', 'सन्यासी', 'पर्दे की रानी', 'प्रेत और छाया', 'पथ की खोज', 'गुनाहों के देवता', 'डूबते मस्तूल', 'सोया हुआ जल', 'वे दिन', आदि मनोवैज्ञानिक धारा के उल्लेखनीय उपन्यास हैं। आजकल जीवन के हरक्षेत्र में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण की दृष्टि पहुँच चुकी है। परिणाम स्वरुप हिन्दी उपन्यास परम्परामें भी मनोवैज्ञानिक उपन्यास की धारा दिन-ब-दिन विकसित हो रही है।

(२) शेवडे जी का मनोवैज्ञानिक उपन्यास 'अधूरा सपना' -

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की प्रवृत्तियों का निर्वाह करनेवाली शेवडे जी की एकमेव औपन्यासिक कृति है 'अधूरा सपना'। हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के परिप्रेक्ष्य में हम 'अधूरा सपना' इस उपन्यास की चर्चा करेंगे। इस उपन्यास के कथानक को शेवडे जी ने बडे मनोवैज्ञानिक ढंग से चित्रित किया है। आत्मकथनात्मक शैली में लिखा हुआ 'अधूरा सपना' (१९६०) एक लघु उपन्यास है। इसकी कथावस्तु रोमैन्टिक तथा मनोवैज्ञानिक है।" उपन्यास का नायक गिरीश, जो प्रेम की विफलता से संसार से विरक्त बना है। मगर बारह वर्षों के बाद भी वह अपनी प्रियतमा को भूल नहीं पाता। उसके मन में एक अव्यक्त आशा है। इसी आशा के बलपर बद्रीनाथ, केदारनाथ की परिक्रमा करता हुआ जिन्दगी गुजारता है। उसके मन में एक अधूरा सपना है, जो उसका संबल बना है।"[१] मनुष्य का मन अंतर बाह्य दोनों ओर से संघर्ष रत रहता है। परंतु उसका आंतरिक संघर्ष भयंकर होता है। 'अहं' की तृप्ति उसका सर्वस्व होता है। परिणामस्वरुप बदले की भावना, ईर्ष्याभाव निर्माण हो जाता है। यह भावना नर और नारी दोनों में समान रुप से विद्यमान होती है। 'अधूरा

---

१ शेवडे - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा.सुनीलकुमार लवटे - पृ.४८

सपना ` इस उपन्यास में शेवडे जी ने नायक और नायिका के अंतरमन के संघर्ष को, जो ' अहं ` भावना के कारण निर्माण हुआ है, उसे चित्रित किया है। उनके अंतरमन को खोलकर उस रहस्य को प्रकट करने का प्रयत्न किया गया है। ईर्ष्या या बदले की भावना का मनोवैज्ञानिक चित्रण इस उपन्यास की खास विशेषता है।

' अधूरा सपना ` की नायिका सुहासिनी में जबरदस्त ` सेक्स अपील ` था। सौंदर्य में पिता के वैभव की शान थी। इससे उसमें ' अहं ` भावना तथा घृणा की ग्रंथी आयी थी। नायक गिरीश भी अपनी बुद्धिमानी के ' अहं ` में मस्त था। एक दिन कॉलेज के वादविवाद समारोह में गिरीश ने सुहासिनी के कुछ मुद्दों की दिल्लगी उडाई। उस समय से सुहासिनी के ' अहं ` पर आघात हुआ। प्रतिशोध की भावना जागृत हुई। इस भावना के कारण सुहासिनी ने वार्षिक महोत्सव में पूरी तैयारी के साथ गीत के तीन कार्यक्रम पेश किये, जिससे गिरीश का हृदय परिवर्तन होकर अनिर्वचनीय व्याकुलता से भर गया। उसने सुहासिनी का अभिनंदन किया मगर सुहासिनी का ' अहं ` अधिक संतुष्ट हुआ। सुहासिनी को अपमान का बदला लेना था। जैसे जैसे गिरीश सुहासिनी की ओर आकर्षित होने लगा, वैसे वैसे सुहासिनी का ' अहं ` तृप्त होने की अपेक्षा अधिक प्रभावकारी बन गया। यह स्पष्ट है कि सुहासिनी श्रेष्ठता की ग्रंथी से ग्रस्त होकर बुरे मार्ग पर जा रही थी। उसने कामुक पुरुष रामलाल से विवाह करके गिरीश का घोर अपमान और स्वयं अपने ` अहं ` को अधिक श्रेष्ठ जताने का प्रयास किया। गिरीश के प्रति प्रेम या आकर्षण होने पर भी ' अहं ` और बदले की भावना के कारण अपने प्रतिस्पर्धि को अधिक यातना पहुँचाने की ग्रंथिसे सुहासिनी ग्रस्त थी। इधर नायक गिरीश भी ' अहं ` की भावना से ग्रस्त था। अपने ` अहं ` के कारण वह सुहासिनी के सामने पराजय स्वीकार करना नहीं चाहता। अपमान से दु:खी गिरीश देश भ्रमन्ति करने निकल पडता है। बारह वर्षोंतक देश भ्रमंति करता रहता है। इस भ्रमंति के समय भी अपनी प्रियतमा

को पाने की एक अव्यक्त आशा उसके मन में व्याप्त है। मगर पराजय स्वीकार करने को मन तैयार नहीं है। संयोगवश बारह वर्षों के बाद गिरीश के सामने आँसू बहाती सुहासिनी नजर आती है। सुहासिनी के 'अहं' के कारण उसकी वासना तृप्ति हुअी थी, मगर मन अतृप्त था। वह गिरीश से कहती है कि -- "गिरीश, मैं क्या तृप्ति हूँ ... भजन के गाते गाते मैं हरि की मूर्ति का दर्शन करती हूँ, तो उसी के साथ ही तुम्हारी मूर्ति भी मेरी आँखों के सामने हो जाती है।" [१] इस वक्तव्य को सुनकर गिरीश धन्य हो जाता है। क्योंकि यहाँ गिरीश को, सुहासिनी को परास्त करने का आनंद होता है। उस वक्त सुहासिनी के पति के नामपर दो लाख रुपयों का चेक लिखकर गिरीश उसे अतृप्त रखकर चला जाता है। प्रियतमा को अधिक पिडीत करने में ही वह अपने 'अहं' की तृप्ति मानता था। "रामलाल की अनुपस्थिति में गिरीश तथा सुहासिनी अपनी अतृप्त इच्छा तृप्त कर सकती थी। यह इच्छा गिरीश के मन में भी उत्पन्न हुई थी पर उसने संयम से काम लिया।" [२] यहाँ शेवडे जी ने दमित इच्छा की तृप्ति शारीरिक उपभोग में न बताकर आदर्श के साँचे में ढालने का प्रयत्न किया है। कामवासना को एक नया मोड दिया गया है। इसलिये उसमें मनोवैज्ञानिकता के साथ साथ आदर्श ही आदर्श है। मनोवैज्ञानिक विचारधारा पर गिरीश, सुहासिनी तथा रामलाल के अंतरमन को चित्रित किया गया है। सुहासिनी का रामलाल के साथ विवाह हो जाना, शारीरिक भोग तृप्ति होने पर भी मन अतृप्त रहना / गिरीश की प्राप्ति के लिए मन का व्याकुल हो जाना तथा गिरीश की बारह वर्षांतक की भ्रमन्ति उसके अंतर संघर्ष की ही प्रेरणा है। इस अंतर संघर्ष को चित्रित करते हुअे भारतीय परम्परा के आधारपर नया दृष्टिकोण पेश किया गया है। व्यक्ति के 'अहं' तथा प्रतिस्पर्धा ग्रंथी को सुलझाने का यह एक सफल प्रयास है।

---

१ शेवडे - अधूरा सपना - पृ.११३

२ शेवडे - अधूरा सपना - पृ.११४

शेवडे जी पूर्णरुप से महात्मा गांधी जी के शिष्य माने जाते थे। गांधी तथा विनोबा भावे जी के दर्शन का उनपर जबरदस्त प्रभाव था। इसी प्रभाव के कारण साहित्य की ओर देखने का उनका दृष्टिकोण लोकमंगल तथा लोकहित का रहा है। 'अधूरा सपना' का अंतिम भाग इस बात का दृष्टान्त है। उपन्यास में आरंभ से किया गया गिरीश तथा सुहासिनी का चित्रण अंतिम भाग तक आते आते कलात्मक मोड लेता है। आरंभ से एक दूसरे को प्राप्त करने के लिए, एक दूसरे को परास्त कर अपने 'अहं' को संतुष्ट कर स्वयं विजयी घोषित करने के लिए लालायित दो प्रणयी आखिर अंतिम स्थिति में अवसर आने पर भी 'अहं' के कारण एक दूसरे से दूर हो जाते हैं। यहाँ सेक्स के बदले हिन्दू संस्कार और हिन्दू नारी की चरित्रमहिमा का महत्व पर बल देना लेखक का स्पष्ट उद्देश्य दिखाई देता है। इस कलात्मक उद्घाटन में ही शेवडे जी का लोकमंगल और जनहित के बारे में सामाजिक दृष्टिकोण नजर आता है।

कुलमिलाकर 'अधूरा सपना' में शेवडे जी ने पात्रों के चरित्र चित्रण में उन के कार्यों के प्रेरक कारणों का सूक्ष्म विश्लेषण किया है। कथानक को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

(ढ) शेवडे जी का साहित्यिक उपन्यास - 'कोरा कागज' --

शेवडे जी के ग्यारह उपन्यासों में 'कोरा कागज' एक मात्र साहित्यिक उपन्यास है। इसमें "एक आदर्श लेखक की कसौटी से जीवन और उसके सत्यों और स्वयं लेखन कार्य को भी परखने का प्रयास किया गया है।"[१] उपन्यास की मूलकथा लेखक और साहित्यिक सचाई को केन्द्र बनाकर विकसित हुई है। साहित्यकार का चरित्र शेवडे जी के खून का अभिन्न अंग है। साहित्यकार की आत्मा को वे अपनी निजी अनुभूतियों से जानते थे। साहित्य उनके लिए आत्म-

---

१ शेवडे - कोरा कागज - भूमिका

की पुकार थी। ' कोरा कागज' एक ऐसे ही साहित्यकार की कहानी है, जो साहित्य को ही सबकुछ मानता है।"इस उपन्यास के नायक निरंजन की कथा एक ऐसे ' स्व ' हितदक्ष रचनाकार की जीवन गाथा है। , जो मूल, अपमान,दरिद्रता जैसी बातों को सहेगा पर किसी भी कीमत पर अपने ' अहं ' को पहुँचती ठेस उसे बर्दाश्त नहीं होगी। ' वियोगी होगा पहला कवि,आहसे उपजा होगा गान ' वाली बात कम से कम निरंजन के बारे में तो सही है।' होश सम्हालते ही रोता का आशिक बना निरंजन प्रेमभंग के दर्द से इस कदर टूट जाता है कि आजीवन यायावरी करने के बाद भी वह जीवन के सही अर्थ एवं रुप को न जान पाता है, न अपना भी। इस टीस ने उसे एक संवेदन शील मन दिया, सोच दी और समझदारी भी। इसी से उसका साहित्यकार व्यक्तित्व साकार हो उठा।"[१] प्रेमभंग से अपमानित निरंजन उपन्यास में अनेक भूमिकायें निभाता है। कभी साहित्यकार,कभी प्रेमी,कभी पति, तो कभी आई.-ए.एस.अफसर, फिर यायावर लेखक कुछ दिन राज्यसभा का सदस्य फिर अन्तमें अन्तिम प्रश्न ' के शोध में वैभव और शानशौकत का त्याग कर लेखक बनने के लिए पलायन करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि - जब साहित्यकार में सृजन की लौ जग जाती है,तो सारा संसार उसके लिए शून्य सा महसूस होने लगता है। निरंजन को ' अन्तिम प्रश्न ' की बेताबी यायावर बना देती है। बम्बई से हिमालय, हिमालय से दहेली फिर वहाँ से भी पलायन इस बात से यह स्पष्ट होता है कि साहित्यिक सत्य की खोज में डूबा रहता है। नये नये प्रयोग उसके विकासात्मकता के द्योतक होते हैं। इसलिये ' कोरा कागज' की कथावस्तु हम एक वाक्य में कहेंगे तो -- ' कोरा कागज ' निरंजन के साहित्यिक जीवन के प्रयोग हैं। निरंजन के जीवन का प्रारंभ ' प्रेमभंग ' और ' अपमान की घटना ' से होता है, जिस पर आधारित कहानी रचना उसका पहला साहित्यिक प्रयोग है।

---

१ शेवडे - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा.सुनीलकुमार लवटे - पृ.५०

साहित्यकार का स्वधर्म है साहित्य सृजन। इसलिये उसे तटस्थ वृत्ति, संवेदनशील हृदय और विविध बहुमुखी जीवन का साक्षात्कार करने की आवश्यकता होती है। उसकी साहित्यिक आत्मा उसे शांत बैठने नहीं देती। अनेक प्रलोभनों के बावजूद भी साहित्यकार 'स्व' की रक्षा करता रहता है। 'कोरा कागज' का नायक निरंजन एक 'स्व' कर्तव्य दक्ष साहित्यकार है। कुछ करके दिखाने की उमंग उसे असिस्टंट कमिश्नर के ओहदे पर विराजमान करती है। वहाँ तनख्वाह के साथ प्रतिष्ठा और कर्नल आनंद की बेटी जयन्ती का रिश्ता भी मयस्सर होता है। पर पद, प्रतिष्ठा, अधिकार जैसी बातों में निरंजन उलझा रहता तो साहित्यकार कैसे बनता ? इस पद को इस्तिफा देकर आत्मा की तलाश में गौतम बुद्ध की तरह गृहत्याग देता है। जीवन का बहुमुखी साक्षात्कार करने के लिए बम्बई आता है। साहित्यिक की दृष्टि से प्रत्यक्ष अनुभव या साक्षात्कार का बहुत बड़ा महत्व होता है। इसलिये निरंजन ने मुंबई में मजदूरों, गरीबों, झोपडीवालों, कबाडी, दरबान, बेकारों, गुनहगार, शराबी, जुआरी आदि वर्ग के लोगोंकी हालत प्रत्यक्ष देखी। इस अनुभव की सहायता से उसके साहित्य में एक गरिमा या आकर्षण आ गया। उसका भूमिगत रहकर लेखन करना तो सब के लिए एक पहेली बन गयी थी। सब लोग ऐसे श्रेष्ठ साहित्यिक की तलाश में थे। इन में 'रंगमंच' की सम्पादिका मंजुश्रीदेवी एक है। सब कुछ देकर भी मंजुश्रीदेवी उसे अपनाना चाहती है। क्योंकि निरंजन की 'आग्निकंकण' कथा पर सदारंगानी चित्रपट बनाना चाहते थे। स्वयं अपर्णा को निरंजन का बेताबी से इंतजार है। क्योंकि निरंजन के किताबों की रायल्टी के बहुत सारे पैसे अपर्णा के पास जमा हो चुके हैं और ये महाशय पायधुनि, भिण्डीबझार की मजदूर बस्ती में मेहरबानी के बने जिन्दगी गुजर रहे हैं। यथासम्भव इन लोगों से मिलनेपर भी उसकी जिन्दगी में कोई परिवर्तन नहीं आता। उसकी यायावरी उसे बदरीनाथ पहुँचाती है। वहाँ की तनहाई और प्राकृतिक सुषमा ने उसके साहित्यिक पक्ष को पुष्ट बनाया। उस

साहित्य सेवा से प्रभावित होकर पंडितजी ने निरंजन को राज्यसभा का सदस्य बनाया। अब तो वह देश की साहित्यिक गतिविधियों का केन्द्र बन जाता है। पर प्रतिष्ठा का जाल उसे कुरेदने लगता है। जिन्दगी की सारी खुशियों के होते हुए भी ' अन्तिम प्रश्न ' की तलाश के कोरे कागज उसे बेचैन बनाते हैं। इस सब से पिंड छुडाने के लिए वह पुन: भूमिगत होता है। वह कहता है कि " न लिखना लेखक का सबसे बडा पराजय है, लेखक के लिए साहित्य सृजन जीवन है, न लिखना मृत्यु।" [१] इसलिए वह कहता है जीवन में अनेक पडाव तो पा लिये मगर ' स्वधर्म ' पालन नहीं कर सका। लेखक का स्वधर्म है अन्तिम प्रश्न की तलाश में निरंतर लिखते रहना। आखिर वह मंजिल मिले या न मिले।

साहित्यिक बडा संवेदनशील और सहृदय होता है। निरंजन का अर्पणा को लिखा हुआ पत्र इस बातका प्रमाण है। निरंजन पत्र में लिखता है -- "यहाँ से जाने से पहले एक बार अन्तिम रुप से तुमसे मिलने की तीव्र इच्छा थी, अपर्णा। लेकिन मुझे अपने कमजोरी का भय था। मैं ने दुनिया में कई बातों का मुकाबला किया है, लेकिन जिस नारी ने मुझे अशेष दान दिया है उसके आँसूओं का मुकाबला करने की मुझमें सामर्थ्य नहीं थी। मैं अपने आपको संभाल पाऊँगा इसका भरोसा नहीं था।" [२] इस संवेदनशील हृदय के कारण ही गौतम बुध्द की तरह अपर्णा को पत्र लिखकर वह चला जाता है। इसी पत्र में लेखक के स्वधर्म के बारे में निरंजन लिखता है कि " लेखक सब कुछ बर्दास्त कर सकता है, अपर्णा। भूख, गरीबी, अपमान, निर्भत्सना, अपयश, प्रेमभंग .... पर वह अपने सामने पडे हुअे कोरे कागज का मुकाबला नहीं कर सकता।" [३] अन्तिम प्रश्न की तलाश में यायावरी करनेवाले निरंजन को इसका उत्तर मिलेगा या नहीं यह कोई

---

१ शेवडे - कोरा कागज - पृ.३९५

२ शेवडे - कोरा कागज - पृ.३९६

३ शेवडे - कोरा कागज - पृ.३९७

नहीं बता सकता, मगर उसकी श्रद्धा है। वह कहत
केवल कलम से ही नहीं लिखा जाता। कागज न मि
जाए, तो भी आत्मा का लेखन तो अखण्ड रुप से

"साहित्य सृजन की व्यथा साहित्यकार ही जानता है, उस व्यथा न
वह अकेला है, एकाकी है। अपने कांटे का ताज उसी को पहनना होता है। अपना क्रॉस उसे खुद ही ढोना पडता है। और कोई उसमें हाथ नहीं बंटा सकता। उसकी पत्नि भी नहीं।"[2] इसी तत्व ने निरंजन को यायावरी बनाया। "इस उपन्यास में साहित्य सृजन, साहित्यकार का उत्तरादायित्व अुसका स्वधर्म तथा साहित्य सृजन की पीडा भी अभिव्यक्त हुई है। स्वहितद्दश्य रचनाकार की यह जीवन गाथा है। इसमें साहित्यिक धर्म का आदर्श है।' कोरा कागज' है, मगर उसका कोरा पन हमें बहुत कुछ बता देता है।"[3]

कुलमिलाकर 'कोरा कागज' उपन्यास में शेवडे जी ने लेखक का स्वधर्म, अुसकी व्यथा वेदनाओं, अुसकी यायावरी वृत्ति, समाज में अुसकी होने वाली मानहानी, ईर्ष्या, कुछ करके दिखाने की उमंग आदि साहित्यिक जीवन से संबंधित बातों का आशय गर्भ चित्रण किया है। पात्रों की भरमार है। असंबंध विवरण भी दिखाई देता है मगर अन्तिम प्रश्न के तलाश में यायावरी करनेवाले साहित्यिक के उद्देश्य तक पहूँचने में यह आवश्यक महसूस होता है। शेवडेजी के पूर्ववर्ती उपन्यासों की तुलना में यह पूर्ण रुपेण अलग स्वरुप का अर्थात साहित्यिक एकमेव उपन्यास है।

(ण) शेवडे जी का दार्शनिक उपन्यास 'अमृतकुम्भ' --

'उपन्यासकार शेवडे जी की अन्तिम कृति 'अमृतकुम्भ' एक दर्शन से भरा उपन्यास है। मनुष्य अपनी उत्तरार्ध की जिन्दगी में अन्तर्मुखी होकर कुछ

---

१ शेवडे - कोरा कागज - पृ.१९९

२ - वही - - पृ.८७

३ शेवडे - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा. सुनीलकुमार लवटे - पृ.५१

हद तक आध्यात्मिक होता है। इन्हीं आध्यात्मिक विचारों से परिपूर्ण एक अभिनव एवं अद्भूत आविष्कार यानें ' अमृतकुम्भ ' उपन्यास है। सत्यकाम एवं पालीन का विश्वपर्यटन आध्यात्मिक समाधान से प्रेरित है। ' अमृतकुम्भ ' में मनुष्य का यह भटकाव कबीर के उस दोहे का स्मरण देता है - जिसमें उन्होंने कहा है -- ' कस्तुरि कुंडलि बसे, मृग ढूंढे बन माही। ऐसे घटि-घटि राम है, दुनिया देखे नाहिं। ' [१]

शेवडे जी में भारतीय संस्कृति के प्रति घोर आस्था है। वे कहते हैं -- ' भारतीय संस्कृति के मूलभूत मूल्यों के प्रति मुझे घोर आस्था है और मेरा दृढ विश्वास है कि उन में ऐसे चिरन्तन तत्व हैं जो विश्व की समस्याओं का समाधान कर सकते हैं और पृथ्वी पर ईश्वर का साम्राज्य उतारने की क्षमता रखते हैं।"[२] इसी आस्था के कारण शेवडे जी कहते हैं -- भारतीय संस्कृति की परम्परा अत्यंत प्राचीन है, उज्ज्वल है। हिमालय की तरह अडिग और अजेय, गंगा की धारा की तरह निर्मल और चिरंतन। इसमें क्या क्या चमत्कार और रहस्य भरे पडे हैं, जिन्हें समझना भी कठिन हो जाता है। जो समझते हैं वे उसका आनन्द उठाते हैं, शांतीसागर में गोते लगाते हैं। भारत की यह उज्ज्वल परम्परा जगत का शक्ति केन्द्र है।

शेवडे जी का अमृतकुम्भ ' उपन्यास भारतीय दर्शन की महानता का परिचायक है। दुनिया के भ्रमणों से प्राप्त विशाल अनुभवों के आधारपर भारतीय यथार्थ परिस्थिति पर आदर्श की कल्पना की है और पाश्चात्य संस्कृति से तुलना करते हुअे यह सिध्द करने का प्रयत्न किया है कि - बोसवीं शतीपर भी भारत की आध्यात्मिक प्रतिष्ठा ज्यों की त्यों है। भारत ही दुनिया को शान्ति का संदेश दे सकता है। क्योंकि उसकी बुनियाद मानवतापर आधारित है।

---

१ शेवडे - व्यक्तित्व एवं कृतित्व - डा.सुनीलकुमार लवटे - ५२

२ शेवडे - व्यक्तित्व, विचार और कृति - मेरे उपन्यासों की पृष्ठभूमि - - शेवडे - पृ.७८

पाश्चात्य देशों के प्रत्यक्ष दर्शन के बाद शेवडे ने बता दिया कि "पश्चिमी देशों में सभी प्रकार की सुख, सुविधाएँ हैं, - बाहर से उनके चेहरों पर स्मित झलकता है पर भितर ही भीतर उनका गुप्त और सुप्त रुदन चलता है, अशान्ति और असुख का अनुभव। इनके उलटे भारत में इन सभी साधनों का अभाव है, ऊपर से दु:ख और दारिद्र्य का साक्षात्कार होता है पर भीतर ही भीतर मन में शान्ति और सन्तोष है।" १

विज्ञान तथा तकनीक के हिंसाचार से तापग्रस्त तडपती आत्मायें भारत देश की ओर आकर्षित हो रही हैं। 'अमृतकुम्भ' उपन्यास की नायिका पालीन पाश्चात्य संस्कृति के कटु अनुभवों को प्राप्त कर, जीवन की मूल्यहिनता तथा यांत्रिकता से तंग आकर आत्मशान्ति के खोज में बिमार शहर न्यूयार्क से भारत आ गयी। तो भारत का सत्यकाम, समाज से अभिशप्त पत्नीत्व के पहले मातृत्व की अवैध सन्तान, जिसने गरीबी और अभाव के दिन देखे जो माँ का संदेश लेकर जीवन की अपूर्णता को पूर्ण करने के लिए भटक रहा है।

"भारतीय संस्कृति का आदर्श और पाश्चात्य वैज्ञानिकता की नफरत करनेवाले पहले आस्ट्रेलियन युवक हैं, जो ब्रह्मानन्द स्वामी बनकर विचरण कर रहे हैं तथा भारतीय देश की आत्मा को पहचान कर इस देश को ही अपना मूल स्थान तथा अपना घर मानकर विचरण कर रहे हैं। इसके अलावा विश्वपर्यटन में मिले सिल्विया, इयान राद्, कैरोलिन, साईमन पार्कर आदि युवक युवतियाँ भारत की आध्यात्मिक शक्ति की ओर आकर्षित हुओ हैं।" २

'अमृतकुम्भ' में हरिपूरा एक ऐसा ग्राम है जो बम्बई, न्यूयार्क से श्रेष्ठ है, क्योंकि यहाँ मानवीयता है। इसी ग्राम में दो संस्कृति का मिलन होता है। सत्यकाम भारतीय संस्कृतिका प्रतिनिधित्व है तो पालीन पाश्चात्य संस्कृति का प्रतिक है। ये दोनो मिलकर विश्वबन्धुत्व और विश्वशांति का संदेश देते हैं।

---

१ शेवडे - अमृतकुम्भ - पृ.७९

२ शेवडे - अमृतकुम्भ - पृ.११८

मानव धर्म विश्व धर्म है और प्रेम उसका मूल है। प्रेम ईश्वर का वरदान है। उसे प्राप्त करने का अधिकार हरेक मनुष्य को है। यह सुख, अध्यात्मिकशान्ति भारत की विशाल चेतना में ही है। क्योंकि भारत विश्व शान्ति का दूत है।

"हरिपूरा न्यूयार्क और बम्बई के दोनों प्राणियों को अपने सहज सुख, सरल और शांत जीवन की तृप्ति देता है। परंतु दोनों का यह पडाव है, मंजिल कहीं आगे है - दोनों अन्वेषण में चल पडे हैं - जीवन की स्थायी शान्ति और सुकून की खोज में ...."[१] मानव अमृत पुत्र है - मानव अमृतस्य पुत्रः। इस मानव में स्थित जीवनशक्ति, चैतन्य और अमृत तत्वों का आवाहन तथा जीवन की स्थायीशान्ति और सुकून की खोज इस उपन्यास की खास विशेषता है।

'अमृतकुम्भ' में धन, अहंकार, अंधानुकरण, युद्ध पिपासा इन पाशवी वृत्तियोंका विरोध किया है। विज्ञान और अध्यात्मज्ञान का समन्वय होना चाहिये। अध्यात्मज्ञान का अर्थ है अद्वैत। याने सारे मानव जाती का ही मैं एक अंश हूँ। वे सब मेरे भाई हैं। उनकी सेवा और कल्याण के लिए ही मुझे विज्ञान चाहिये। यही दृष्टि अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय करती है। यदि विज्ञान के पिछे यह अध्यात्मज्ञान न रहेगा तो विज्ञान मानव का सर्वनाश ही करेगा। सारा विश्व एक सुन्दर नन्दनवन की जगह भयंकर स्मशान बन जायेगा। इसलिये 'अमृतकुम्भ' का नायक सत्यकाम मानव जाती को आशा दिलाता है और कहता है - मानव 'अमृतस्य पुत्र' है। वह विज्ञान और तकनीक की विकृतियाँ अवश्य ही नियंत्रित करेगा और वह शक्ति होगी अध्यात्मिक शक्ति।"[२]

प्रकृति के बारे में सत्यकाम कहता है - 'प्रकृति हमारी माता है, उससे संघर्ष करना विकृति है, उससे प्रेम करना तथा उसके अनुशासन में रहना संस्कृति है। इसलिये यदि विज्ञान इस अध्यात्म ज्ञान से मिलकर कार्य करेगा तो उसका शासन ब्रह्मानुशासन कहा जायेगा। उसका मूल होगा 'मानव धर्म'।'[३]

---

१ शेवडे - अमृतकुम्भ - प्रकाशकीय से उद्धृत।

२ शेवडे - अमृतकुम्भ - पृ.११९

३ शेवडे - अमृतकुम्भ - पृ.१६२

ब्रह्म के बारे में कहा गया है कि "जो पिंड में है, वह ब्रह्माण्ड में है। जो आत्मा में है वही परमात्मा में है। आत्मा अमर है, उसे बाहर ढूंढने की जरुरत नहीं। वह अपने भीतर है। उसका परिज्ञान हो जाय तो न जीवन से भय होगा न मृत्यु से।"[१] सारा मानव परिवार एक है यही इस जीवन दर्शन का प्रमुख आधार है। इसका जीवन दर्शन कुछ कालातीत एवं चिरंतन तत्वोंपर आधारित है। उपन्यास का आशय और परिप्रेक्ष्य अन्य उपन्यासों की तुलना में अधिक गहरा और व्यापक है।

कुलमिलाकर दार्शनिक उपन्यास की दृष्टिसे इसमें की गयी अध्यात्म चर्चा, जन्ममृत्यु के बारे में किया गया चिंतन, अध्यात्मज्ञान की आवश्यकता प्रकृति का रहस्य, द्वैत अद्वैत, ब्रह्मा, पिंड आदि अध्यात्मिक विषयों को कथा के माध्यम से शेवडे जी ने अत्यंत रोचक ढंग से प्रस्तुत किया है।

(ग) निष्कर्ष --

शेवडे जी ने सामाजिक, राजनीतिक, दार्शनिक, साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक जैसे सभी प्रकार के उपन्यासों का प्रणयन किया। सामाजिक उपन्यासों में समाजसुधारक, राजनीतिक में सेनानी, साहित्यिक में साहित्यिक तथा दार्शनिक उपन्यास में दार्शनिक के रुप में शेवडे जी ने अपने मौलिक विचार व्यक्त किये हैं। मानव कल्याण, मानव की महानता और भव्यता में विश्वास रखनेवाले शेवडे जी ने अपने सामाजिक उपन्यासों में समाज के विविध समस्याओं को चित्रित करके मानव को सुख और मांगल्य की ओर इंगित किया है। उसके प्रारंभिक उपन्यास सामाजिक स्वरुप के हैं। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए अनेक पात्रों का चरित्र चित्रण गांधीवादी ढाँचे में ढालने का प्रयास किया है। यहाँ प्रेमचंदकालिन आदर्श परम्परा का पालन किया गया है। परवर्ती उपन्यासों में पाप पुण्य की नयी व्याख्या, सतीत्व की परिभाषा, शैक्षिक

---

१ शेवडे - अमृतकुम्भ - पृ. १६३

जगत का -हास परिहास, प्रेम की उदात्त कल्पना, गाँधीवादी विचारों का समर्थन जैसी बातें अुनके विचारों की प्रगतिशीलता का प्रमाण हैं। इससे वर्ण्य विषय में बहुविधता और विचारों में सूक्ष्मता और मौलिकता आ गयी है।

अुनके राजनीतिक उपन्यासों में स्थल काल की एकता, दृश्यों का सजीव अंकन एवं तत्कालिन परिस्थिति का बोध मिलता है। तत्कालिन परिस्थिति के परिवेश में `ईसाईबाला` में साम्प्रदायिक एकता, `ज्वालामुखी` में अगस्त क्रान्ति का वर्णन तो `मग्नमंदिर` में स्वातंत्र्योत्तर भारत की स्थिति का वर्णन उनके राजनीतिक उपन्यासों के विकासात्मकता का ही द्योतक है। कलाकार तो अुनके शरीर का अभिन्न अंग था। जिसकी व्यथा वेदनाओं को उन्होंने अनेक उपन्यासों में स्वर देने का प्रयास किया है। साहित्यिक उपन्यास `कोरा कागज` में इसका चरमोत्कर्ष हुआ नजर आता है। इसकी मूलकथा लेखक और साहित्यिक सचाई को केन्द्र बनाकर ही विकसित हुई है।

प्रारंभिक अवस्था में सामाजिक उपन्यास लिखने वाले शेवडे जी विनोबाजी के सम्पर्क में आकर सर्वोदयी बने। आगे चलकर अपनी आखरी अवस्था में वे आध्यात्मिक बने नजर आते हैं। दर्शन से भरी अुनकी अन्तिम कृति इस का द्योतक है, जिसका जीवन दर्शन कुछ कालातीत एवं चिरंतन तत्वोंपर आधारित है। शेवडे जी के उपन्यासों का स्वरुप की दृष्टिसे विहंगमावलोकन करने के बाद यह बात स्पष्ट होती है कि समय के अनुसार अुनके उपन्यासों का स्वरुप बदलता गया है। आरंभ में उन्होंने सामाजिक उपन्यासों का प्रणयन किया तो अन्त में दार्शनिक। बीच में उन्होंने राजनीतिक उपन्यासों का प्रणयन किया। स्वरुप की दृष्टि से अुनके उपन्यासों की शक्लसूरत भले ही बदलती रही परंतु हर तरह के उपन्यासों में अुनका सुधारक और दार्शनिक अनिवार्य रुप से उपस्थित हुआ है। उनका उपन्यास साहित्य सामाजिक दायित्व को लेकर ही विकसित हुआ है। यही कारण है कि उनके उपन्यास स्वरुप की दृष्टिसे छिछले मनोरंजन के शिकार कभी नहीं हुअे।